Toppersnotes®
Unleash the topper in you

AIAPGET

आयुर्वेद

अखिल भारतीय आयुष स्नातकोत्तर प्रवेश परीक्षा

भाग - 1

SIERRA INNOVATIONS

INDEX

Ch. No.	Chapter	P.N.
1.	**चरक संहिता - पूर्वार्द्ध**	1
	➢ सूत्र स्थान	2
	➢ निदान स्थान	46
	➢ विमान स्थान	54
	➢ शारीर स्थान	62
	➢ इंद्रिय स्थान	72
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक सूत्रस्थान अध्याय 1-20)	75
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक सूत्रस्थान अध्याय 21-30)	80
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक विमान एवं इन्द्रिय स्थान)	85
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक निदान एवं शारीर स्थान)	90
2.	**चरक संहिता - उत्तरार्ध**	95
	➢ चिकित्सा स्थान	95
	➢ कल्प स्थान	143
	➢ सिद्धि स्थान	148
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक चिकित्सा अध्याय 1-15)	155
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक चिकित्सा अध्याय 16-30)	160
	➢ **प्रैक्टिस प्रश्न** (चरक कल्प एवं सिद्धि स्थान)	165

1 CHAPTER चरक संहिता

अग्निवेश कृते तन्त्रे चरक प्रतिसंस्कृते ।

- उपदेष्टा - आत्रेय
- तन्त्रकर्ता - अग्निवेश
- प्रतिसंस्कर्ता - चरक
- सम्पूरक - दृढबल

चरक संहिता पर कुल 41 टीकायें लिखी गई है। जिनमें से 17 संस्कृत टीकायें हैं।

टीका	टीकाकार	काल
1 चरक न्यास	भट्टार हरिश्चन्द्र	6 शताब्दी
2 चरक पंजिका	स्वामि कुमार	7 शताब्दी
3 निरन्तर पद व्याख्या	जेज्जट	9 शताब्दी
4 न्यास	अमितप्रभ	9 शताब्दी
5 चरक वार्तिक	क्षीरस्वामि दत्त	9 शताब्दी
6 परिहार वर्तिका	आषाढ वर्मा	9 शताब्दी
7 वृहत तन्त्र प्रदीप	नरदत्त	10 शताब्दी
8 चरक चन्द्रिका	गयदास (चन्द्रिकाकार)	11 शताब्दी
9 चरक भाष्य	श्री कृष्ण वैद्य	11 शताब्दी
10 आयुर्वेद दीपिका	चक्रपाणी (चरक चतुरानन, सुश्रुत सहस्त्रनयन)	11 शताब्दी
11 चरक तत्व प्रदीपिका	शिवदास सेन	16 शताब्दी
12 चरक प्रकाश कौस्तुभ	नरसिंह कविराज	17 शताब्दी
13 चरकोपस्कार	योगिन्द्रनाथ सेन	19 शताब्दी
14 जल्कल्पतरू	गंगाधर राय	19 शताब्दी
15 चरक प्रदीपिका	ज्योतिष चन्द्र सरस्वति	20 शताब्दी

चरक संहिता का अंग्रेजी में अनुवाद अविनाश चन्द्र ने 1891 में किया है।

चरक संहिता पर प्रथम अंग्रेजी संस्करण प्राणजीवन मेहता ने जामनगर से 1949 में प्रकाशित किया । चरक संहिता का सैद्धान्तिक पक्ष योग व सांख्य दर्शन से तथा व्यवहारिक पक्ष न्याय व वैशेषिक दर्शन से सामन्जस्य रखता है।

चरक संहिता की विषय वस्तु 4 सूत्रों में रखी है।

1. गुरू सूत्र 2. शिष्य सूत्र 3. प्रतिसंस्कृत सूत्र 4. एकीय सूत्र

चरक संहिता में कुल 3 आत्रेय हुए है।

1. पुनर्वसु आत्रेय - चरक संहिता के उपदेष्टा । इन्हे चन्द्रभागी कहा जाता है।
2. कृष्णात्रेय - च.सू. 11 में इनका वर्णन आया है इन्होने अष्टत्रिक का वर्णन किया है।
3. भिक्षु आत्रेय - च. सू. 25 में इनका वर्णन आया है ये कालवाद के समर्थक है।

चरक संहिता को द्वादश सहर्त्री संहिता कहते है। इसमें उपलब्ध सूत्रों की संख्या 9295 है। चरक संहिता में कुल योगों की संख्या 1949 है।

चरक संहिता में 8 स्थान तथा कुल 120 अध्याय है।

1. सूत्रस्थान - 30
2. निदानस्थान - 8
3. विमानस्थान - 8
4. शारीरस्थान - 8
5. इन्द्रिय स्थान - 12
6. चिकित्सा स्थान - 30
7. कल्प स्थान - 12
8. सिद्धि स्थान - 12

- आचार्य दृढबल को चरक संहिता का सम्पूरक कहा जाता है उन्होने चरक संहिता के 41 अध्याय लिखे है। कल्प व सिद्धि स्थान के 12 – 12 व चिकित्सा स्थान के 17 अध्याय दृढबल ने लिखे है।
- आचार्य चरक ने चिकित्सा स्थान के 13 अध्याय लिखे है।रसायन, वाजिकरण, ज्वर, रक्तपित्त, प्रमेह, कुष्ठ, गुल्म ,राजयक्ष्मा , अर्श ,अतिसार , विसर्प, मदात्यय, द्विवर्णी ।
- चरक विशुद्ध का पुत्र, वैशम्पायन का शिष्य व कनिष्क का राजवैद्य था । चरक पंचनद प्रान्त में इरावती व चन्द्रभागा नदियों के बीच स्थित कपिस्थल ग्राम का रहने वाला था।
- दृढबल कपिलबली का पुत्र था तथा इसका काल 4 थी शताब्दी था।

चरक सूत्रस्थान

चरक संहिता के सूत्रस्थान को अग्निवेश तंत्र का शुभ सिर तथा श्लोक स्थान कहते है।
चरक संहिता के सूत्रस्थान में 30 अध्याय है। जो **7** चतुष्क में विभाजित है।

1. भेषज चतुष्क
2. स्वस्थ चतुष्क
3. निर्देश चतुष्क
4. कल्पना चतुष्क
5. रोग चतुष्क
6. योजना चतुष्क
7. अन्नपान चतुष्क

- संग्रह द्वय - दशप्राणायतनीय अध्याय, अर्थेदशमहामूलीय अध्याय ।

चरक संहिता में कुल 7 सम्भाषा परिषद का वर्णन है।

1. दीर्घजीवीतीय अध्याय - च.सू. 1 - आयुर्वेदावतरण से सम्बन्धित 53 आचार्यों ने भाग लिया ।
2. वातकलाकलीय अध्याय - च.सू. 12 - वात ,पित्त, कफ के गुण कर्मो से सम्बन्धित - 8 आचार्य ।
3. यजःपुरूषीय अध्याय - च.सू. 25 - पुरूष तथा रोग उत्पत्ति से सम्बन्धित - 11 आचार्य ।
4. आत्रेयभद्रकाप्यीय अध्याय - च.सू. 26 - रसों की संख्या से सम्बन्धित - 10 आचार्य।
5. खुड्डिकागर्भावकान्ति शारीर - च.शा. 3 - गर्भ की उत्पत्ति से सम्बन्धित ।
6. शरीरविचयशारीर -च.शा. 6 - गर्भ में सर्वप्रथम अंगोत्पत्ति से सम्बन्धित ।
7. फलमात्रासिद्धि अध्याय - च.सि. - दृढबल द्वारा आयोजित - बस्ति के गुणों से सम्बन्धित ।

दीर्घन्जीवितीयमध्याय

अथातो दीर्घन्जीवितीयंमध्यायं व्याख्यास्यामः। नामक सूत्र में 8 पद हैं।
अथ, इति, दीर्घ ,जीवित,अध्याय ,वि, आख्या , स्याम् ।
भगवान इन्द्र के पर्याय - अमरेश्वर ,सहरत्राक्ष , शचिपति ,सुरेश्वर शक्र ,बलहन्तार ।
भारद्वाज के पर्याय - उग्रतपा , महामति ।
आयुर्वेद का अवतरण - ब्रम्हा - दक्षप्रजापति - अश्विनीकुमार - इन्द्र - भारद्वाज - आत्रेय ।
प्रथम सम्भाषा - आयुर्वेद के अवतरण से सम्बन्धित - 53 ऋषियों ने भाग लिया ।
स्थान - पार्श्वे हिमवते शुभे ।
धर्मार्थकाममोक्षाणांमारोग्यं मूलंमुत्तमम् । रोगस्यस्यापहर्तार: श्रेयसो जीवितस्य च ।। च.सू. 1/15
धर्म, अर्थ ,काम व मोक्ष का प्रधान कारण आरोग्य है तथा रोग श्रेयस (अलौकिक सुख) व जीवित (लौकिक सुख) को हरने वाले है।
हेतु लिंङ्वॉषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम् । त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः । च.सू. 1/24
त्रिसूत्र - हेतु ,लिंग, औषध । बुबुधे यं पितामह - ब्रम्हा को स्वयं प्रकाशन ।
महर्षयस्ते ददर्शयथावज्ञांन चक्षुषा । सामान्यं च विशेषं च गुणान् द्रव्याणि कर्म च समवायं च ।
महर्षियों को अपनी ज्ञान चक्षु से षट्पदार्थ का ज्ञान हुआ ।
चरक के अनुसार षट्पदार्थ का क्रम - सामान्य, विशेष,गुण ,द्रव्य ,कर्म ,समवाय ।
वैशेषिक दर्शन के अनुसार षट्पदार्थ का क्रम - द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष समवाय ।
आत्रेय पुनर्वसु के 6 शिष्य थे - अग्निवेश , भेल, जतुकर्ण, पाराशर, हारित क्षारपाणि ।
अग्निवेश ने तंत्र की सर्वप्रथम रचना बुद्धि विशेष के कारण की ।
पुनर्वसु आत्रेय ने अपने शिष्यों में 8 ज्ञान देवताओं का प्रवेश कराया । बुद्धि, सिद्धि, स्मृति, मेधा,धृति ,कीर्ति ,क्षमा ,दया ।
आयुर्वेद शब्द की निरूक्ति -
हिताहितं सुखं दुखमायुस्तस्य हिताहितम् । मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेद: स उच्यते । च.सू.1/41
आयु के लक्षण -
शरीरेन्द्रियसत्वात्मसंयोगो धारि जीवितम् |नित्यगश्चानुन्धश्च पर्यायैरायुरूच्यते।। च.सू.1/42
आयु के पर्याय - धारि, जीवित ,नित्यग अनुबन्ध । आयु का पर्याय चेतनानुवृति च.सू. 30 में बताया है। आयुर्वेद को आयु का पुण्यतम वेद माना है।
सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धि कारणं । ह्वास हेतु विशेषश्च प्रवतिरूभयस्य तु ।। च.सू 1/44
आचार्य चक्रपाणी ने सामान्य व विशेष के तीन - तीन भेद किये हैं।

सामान्य	विशेष
1. द्रव्य-सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धि कारणं ।	1 द्रव्य- ह्रास हेतु र्विशेषश्च ।
2. गुण- सामान्यं ऐकत्वकरं ।	2 गुण- विशेषस्तु पृथकत्वकृत् ।
3. कर्म- तुल्यार्थता हि सामान्यं ।	3 कर्म- विशेषस्तु विपर्ययः ।

न्याय दर्शन ने सामान्य व विशेष के 2 – 2 भेद पर व अपर बताये हैं ।
सत्वमात्मा शरीरं च त्रयमेतत् त्रिदण्डवत् । सत्व ,आत्मा व शरीर को त्रिदण्ड या त्रिस्तम्भ कहा गया है। स पुमांश्चेतनं तच्चाधिकरणं स्मृतम् । आयुर्वेद का अधिकरण पुरूष या पुमान् को माना गया है। पुरूष ही चेतन है।

द्रव्य / कारण द्रव्य की संख्या - 9
खादी (आकाश ,वायु,अग्नि,जल,पृथ्वी), आत्मा ,मन, काल दिशा ।
द्रव्य के प्रकार -2 कारण द्रव्य व कार्य द्रव्य ।
द्रव्य के भेद -3 दोषप्रशमन ,धातुप्रदुषण ,स्वस्थवृत । तथा जांगम ,औद्भिद ,पार्थिव ।
गुण - चरक ने गुणों की संख्या 41 बताई है।
न्याय - 24 । वैशेषिक - 17 । मिमांसा - 21 । वाग्भट - 27 । योगिन्द्रनाथ सेन - 42 ।
सार्था गुर्वादयो बुद्धि प्रयत्नान्ताः परादयः ।

- सार्था / इन्द्रिय गुण - 5 शब्द ,स्पर्श रूप,रस गंध ।
- परादि गुण - 10
- गुर्वादि गुण -20
- आध्यात्मिक गुण - 6 बुद्धि, सुख, दुख ,इच्छा ,द्वेष , प्रयत्न ।
- योगिन्द्रनाथ सेन ने मन को अतिरिक्त माना तथा गुणों की संख्या 42 बताई है।
- गुर्वादि गुणों को शारिरिक गुणों की संज्ञा गंगाधर राय ने दी है।

कर्म - प्रयत्नादि कर्म चेष्टितम् उच्यते ।
वैशेषिक दर्शन ने कर्म के 5 प्रकार बताये है। उत्क्षेपण, अवक्षेपण, प्रसारण, आकुचन ,गमन ।
समवायोऽपृथग्भावो भूम्यादिनां गुणैर्मतः । भूमि आदि द्रव्यों का अपने गुणों के साथ जो अपृथक्कभाव सम्बन्ध है उसे समवाय सम्बन्ध कहते हैं।

द्रव्य - यत्राश्रिता कर्म गुणा: कारणं समवायी यत् तद् द्रव्यं। च.सू. 1/51
कियागुणवत् समवायीकारणं द्रव्यम् । सु सू. 40
रसादिनां पंचानां भूतानां यदाश्रयभूतं तद् द्रव्यम् । भावप्रकाश ।
गुण - समवायी तु निश्चेष्ट: कारणं गुण: । च.सू 1/51
कर्म संयोगे च विभागे च कारण द्रव्यमाश्रितम् |कर्तव्यस्य किया कर्म कर्म नान्यदपेक्षते। च.सू. 1/ 52
कर्तव्य की किया को कर्म कहते हैं संयोग व विभाग के लिए कर्म किसी अन्य साधन की अपेक्षा नहीं रखता।
इस आयुर्वेद रूपी तन्त्र का प्रयोजन धातु साम्य किया है।
आयुर्वेद के प्रयोजन का वर्णन चरक ने च.सू. 30 में किया है।
रोगों के त्रिविध हेतु - काल ,बुद्धि व इन्द्रियों का मिथ्या ,अयोग व अतियोग होना ।
व्याधि के आश्रय चरक ने 2 बताये बताये हैं शरीर व मन जबकि वेदना के आश्रय 3 होते हैं शरीर, मन व इन्द्रियां ।

दोष भेद - वायु पितं कफश्चोक्तः शरीरो दोष संग्रहः । चरक
वातपित्त श्लेष्माणं देह सम्भव हेतवः । सुश्रुत
वायु पितं कफश्चेति त्र्यो दोषाः समासतः । वाग्भट
शारिरिक दोषों की चिकित्सा - देवव्यापाश्रय ,युक्तिव्यापाश्रय ।
मानसिक रोगों की चिकित्सा - ज्ञान ,विज्ञान, धैर्य ,स्मृति ,समाधि ।
काश्यप के अनसार मानसिक रोगों की चिकित्सा - ज्ञान, विज्ञान , धी वीर्य ,स्मृति ।
वाग्भट के अनुसार मानसिक रोगों की चिकित्सा - धीधैर्यात्मादिविज्ञानं मनौदोषौषधम् परम् ।

दोषों के गुण -

वात	पित्त	कफ
चरक - 7	चरक - 7	चरक - 7
रूक्ष शीतो लघु सुक्ष्मश्चलोऽथविशदःखरः	सस्नेहंमुष्णंतीक्ष्णच द्रव्यं अम्लं सरं कटु	गुरूशीतमृदु स्निग्धं मधुर स्थिर पिच्छिलाः ।
वाग्भट - 6	वाग्भट - 7	वाग्भट - 7
तत्र रूक्षो लघु शीतः खरः सुक्ष्मश्चलोऽनिलः।	पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं लघु विस्त्रं सरं द्रवम्	स्निग्ध शीतो गुरू मन्दः श्लक्ष्णो मृत्स्नः स्थिरः कफ: ।

- वाग्भट ने वात का विशद गुण नहीं माना है। लघु गुण चरक के अनुसार केवल वात का होता हैं जबकि वाग्भट के अनुसार वात व पित्त दोनों का होता है।
- वात व कफ के शीत गुण समान होतें है।
- चरक ने वातकलाकलीय अध्याय में वात के 6 गुण बताये है। सुक्ष्म चल के स्थान पर दारूण गुण बताया।
- चरक ने पित्त के गुणों में अम्ल ,कटु अतिरिक्त माना जबकि वाग्भट ने लघु ,विस्त्र गुण अतिरिक्त माना है।
- वाग्भट ने कफ के मधुर गुण के स्थान पर मंद बताया हैं। वाग्भट ने दोषों के गुणों में रसों को शामिल नहीं किया है।

दोष	**प्रकोपक रस**	**शामक रस**
1 वात	कटु ,तिक्त ,कषाय	लवण ,अम्ल ,मधुर
2 पित्त	कटु,अम्ल लवण	तिक्त ,मधुर ,कषाय
3 कफ	मधुर,अम्ल ,लवण	कटु ,तिक्त ,कषाय ।

रसों की उत्पत्ति में प्रधान कारण जल व पृथ्वी हैं जबकि अप्रधान कारण आकाश ,वायु व अग्नि होतें है। रस की योनि जल है।

रस	**महाभूत**	**दोष प्रकोप**
1 मधुर	पृथ्वी,जल	कफ
3 लवण	जल,अग्नि	पित्त ,कफ
4 कटु	वायु,अग्नि	पित्त ,वात
5 तिक्त	वायु ,आकाश	वात
6 कषाय	वायु ,पृथ्वी	वात

आत्मा - निर्विकार परसत्वात्मा सत्वभूतगुणेन्द्रियः। चैतन्यकारण नित्यो द्दष्टा पश्यति हि किया: । च.शा. 1/56
निर्विकार परसत्वात्मा सर्वभूतानां निर्विशेषः। च.शा. 4/33

साध्य रोगों का चिकित्सा सूत्र -
विपरीतगुणैर्देशमात्राकालोपपादितैः। भेषजैर्विनिवर्तन्ते विकाराः साध्यसम्मताः। देश ,मात्रा व काल के विपरीत गुण वाली औषध के सेवन से साध्य रोग ठीक हो जाते है।
असाध्य रोगों की चिकित्सा - साधनं न त्वसाध्यानां व्याधिनामुपदिश्यते । असाध्य व्याधियों की चिकित्सा का कोई साधन नहीं है।
द्रव्य के भेद - **3** दोषप्रशमन ,धातुप्रदुषण ,स्वस्थवृत । तथा जांगम ,औद्भिद ,पार्थिव ।
1 जांगम द्रव्य - 19 - मधु ,गोरस , पित्त, वसा ,मज्जा , रक्त ,मांस, मल, मूत्र, चर्म ,वायु ,अस्थि ,स्नायु ,श्रृंग ,नख ,खुर, केश, रोम ,रोचन ।
2 पार्थिव द्रव्य - 15 - स्वर्ण ,मण्डूर (मल), पंच लौह ,सिकता ,सुधा ,मनःशिला , आल (हरताल), मणि ,लवण ,गैरिक ,अंजन ।
3 औद्भिद द्रव्य- 18 - मूल,त्वक्, सार ,निर्यास, नाल, स्वरस ,पल्लव ,क्षार, क्षीर, फल, पुष्प ,भस्म, तैल ,कण्टक, पत्र ,शुण्गं कन्द ,प्ररोह ।

मूलीनी द्रव्य - 16

1 वमन -3	शणपुष्पी,बिम्बी ,वचा ।
2 नस्य -2	श्वेता ,ज्योतिषमति
3 विरेचन -11	श्यामा,त्रिवृत ,सप्तला,दंती,द्रवन्ती ,हस्तिंती ,अजगंधा ,गवाक्षी,अधोगुडा ,क्षीरीणी,वषाणिका

फलीनी द्रव्य - 19

1 वमन -8	षट्वामक ,त्रपुष हस्तिपर्णी ।
2 नस्य -1	अपामार्ग
3 विरेचन -10	शंखीनी, आरग्वध ,कम्पीलक ,मुलैठी-2,करन्ज -2 ,हरीतकी ,अन्तःकोटरपुष्पी ,वायविडंग

शोधन वृक्ष - 6 (क्षीरी वृक्ष - 3, त्रिवल्कल - 3)
क्षीरी वृक्ष - अर्क (वमन व विरेचन दोनों),स्नूही (विरेचन),अश्मन्तक (वमन)। चरक के अनुसार इन्हे ही क्षीर त्रय कहते है। जबकि रस तरंगिणी के अनुसार क्षीरत्रय अर्क, वट, स्नूही शामिल हैं।
त्रिवल्कल - कंटकी करन्ज (विरेचन),तिल्वक (विरेचन), शोभान्जन (विसर्प,शोथ,अर्श दद्रु आदि में प्रयुक्त)।
चतुर्विध स्नेह - घृत ,तैल ,वसा ,मज्जा।
स्नेहना जीवना बल्या वर्णोपचयवर्धनाः। स्नेहा ह्येते च विहिता वातपित्तकफापहाः।
पंचलवण- सैंधव ,सौवर्चल ,विड ,औद्भिद ,सामुद्र ।
अष्टविध मूत्र - मूत्र का सामान्य रस चरक ने कटु तथा अनुरस लवण बताया है।
दीपनीय विषघ्न च कृमिहनं च उपदिश्यते । पाण्डु रोगोपसृष्टानामुत्तमं शर्मं चोच्यते ।।
चरक के अनुसार मूत्र वातानुलोमक पित्तरेचक कफशामक होता है।
वाग्भट के अनुसार मूत्र पित्तवर्धक, सुश्रुत के अनुसार त्रिदोषघ्न तथा काश्यप के अनुसार रसायन होता हैं ।

मूत्र	रस	गुण
1 गाय	मधुर	दोषघ्न ,कृमिकुष्ठनुत ,उदररोगे हितम् ।
2 शैंस	कार	खर्णा पोफलखगद्रं
4 आवि	तिक्त	स्निग्धं पित्तावरोधी च।
5 उष्ट्र	तिक्त	श्वासकास अर्शोघ्नं ।
6 हस्ति	लवण	हितं तु कृमि कुष्ठिनाम् बद्धविण्मूत्रविषकफविकार अर्शनाशक ।
7 वाजि	तिक्त ,कटु	कुष्ठव्रण विषापहम् ।
8 खर	-	उन्माद अपस्मार ग्रहबाधानाशक ।

अष्टविध क्षीर - उष्ट्री,आवी ,अजा,गोक्षीर,माहीष ,हस्तिनी ,वड्वा(घोडी), रूत्री ।
क्षीर के सामान्य गुण- प्रायशो मधुरं स्निग्धं शीत स्तन्य पयो मतम्। प्रीणनं बृंहणं वृष्यं मेध्यं बल्यं मनस्करम् । पण्डु रोगे डम्लपित्ते च शोषे गुल्में तथोदरे ।।

तत्वविद् चिकित्सक - योगवित्वप्यरूपज्ञस्तासां तत्वविदुच्यते।
औषधियों के रूप आदि का ज्ञान ना रखने वाला व्यक्ति भी यदि उनके प्रयोग का ज्ञान रखता हो तो उसे तत्वविद् चिकित्सक कहते है।
उत्तम चिकित्सक - योगमासां तु यो विद्यादेशकालोपपादितम्। पुरूषं पुरूषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तम् ।। जो चिकित्सक प्रत्येक पुरूष की परिक्षा करके देश काल के अनुसार औषध योग को जानता है उसे उत्तम चिकित्सक कहते है।
यथा विषं यथा शस्त्रं यथाग्निरशनिर्यथा। च.सू.1 / 125
अज्ञात औषध विष ,शस्त्र ,अग्नि व वज्र के समान हानिकारक है जबकि ज्ञात औषध अमृत के समान लाभदायक होती है।
योगादपि विषं तीक्ष्णमुत्तमं भेषजं भवेत्। भेषजं चापि दुर्युक्तं तीक्ष्णं सम्पद्यते विषम्। च.सू. 1/127
युक्ति पूर्वक प्रयोग करने से तीक्ष्ण विष भी औषध का कार्य करता है जबकि अयुक्ति पूर्वक करने से भेषज भी विष का कार्य करती है।
वरमाशीविषंविषं क्वथितं ताम्रमेव वा । पीतमत्यग्निसंतप्ता भक्षिता वाऽप्ययोगुडाः ।
नतु श्रुतवतां वेषं विभ्रतां शरणगतात् गृहीतमन्नं पानं वा वित वा रोगपीडितात् || च.सू. 1/132-133
भयंकर सर्पविष व उबला हुआ तांबा पी लेना अच्छा है अथवा तपाये हुए लौहे के गोले खा लेना अच्छा है किन्तु शास्त्रज्ञ चिकित्सकों का वेश धारण करने वाले कपटी वैद्य को शरण में आये हुए पीडित व्यक्ति से अन्न पीने के पदार्थ व धन लेना उचित नहीं है।
तदैव युक्तं भैषज्य यदारोग्याय कल्पते। स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् । च.सू. 1/135
वही औषध ठीक है जो आरोग्य प्रदान करती है तथा वही चिकित्सक श्रेष्ठ है जो रोगो से मुक्ति प्रदान करता है।

अपामार्गतण्डुलीय अध्याय

अन्तः परिमार्जन द्रव्यों का वर्णन है।
शिरोविरेचक द्रव्य - 25 अपामार्ग ,पिप्पली ,मरिच, शुण्ठी , शिरीष ,लवण द्वय(सैंधव व सोवर्चल) , ज्योतिष्मती आदि ।
चरक के अनुसार शिरोविरेचक द्रव्यों में मधुर व अम्ल रस नहीं होता है।
विरेचन द्रव्यों के आश्रय 6 होते है क्षीर ,मूल त्वक्, पत्र पुष्प व फल ।
शिरोविरेचन द्रव्यों के आश्रय 7 होते है। मूल, त्वक्, पत्र, पुष्प फल कन्द व निर्यास ।
वमन द्रव्य 10 - मदनफल ,जीमूतक ,इक्ष्वाकु ,धामार्गव कुटज कृतवेधन ,मधुक ,पिप्पली निम्ब व ऐला । विरेचन द्रव्य 17 - त्रिफला ,त्रिवृत , दन्ती, सप्तला ,वचा ,करंज आदि ।
आस्थापन द्रव्य व अनुवासन द्रव्य 29 - दशमूल के द्रव्य, पंचलवण ,चतुर्विध स्नेह एरण्ड ,मदनफल आदि
पंचकर्माणि कुर्वीत मात्राकालौ विचारयन् । मात्रा व काल का विचार कर पंचकर्म का प्रयोग करना चाहिए । चरक संहिता में सर्वप्रथम पंचकर्म शब्द का वर्णन अपामार्गतण्डुलीय अध्याय में आया है।
युक्तिज्ञ चिकित्सक का वर्णन अपामार्ग तण्डुलीय अध्याय में किया हैं
चिकित्सा की सिद्धि का आधार युक्ति है मात्राकालाश्रय युक्ति : सिद्धियुक्तो प्रतिष्ठिता ।
चरक ने अपामार्ग तण्डुलीय अध्याय में 28 यवागु का वर्णन किया है जिनमें से 6 पेया है।
1 पाचनी गाहिणी पेया 2 वातविकारनाशक पेया 3 मूत्रकृच्छ नाशक पेया 4 पित्तश्लेष्मातिसार नाशक पेया 5 रक्तातिसार नाशक पेया 6 आमातिसार नाशक पेया
अष्टाविंशतिरित्येता यवाग्व: परिकीर्तिता: ।

1. शूलनाशक यवागु - पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
2. पाचनीग्राहीणी पेया - दधित्थबिल्वचांगेरीतक्राडिमसाधिता।
3. वातविकार नाशक पेया - सवाते पंचमूलिकी ।
4. पित्तश्लेष्मातिसारनाशक पेया - शालपर्णीबलाबिल्वैः पृश्निपर्णा च साधिता ।
5. रक्तातिसारनाशक पेया - पयस्यर्धोदके च्छागे ह्रीबेरोत्पलनागरैः ।
6. आमातिसार नाशक पेया —दद्यात् सातिविषां पेया।

7. मूत्रकृच्छनाशक पेया - श्वदंष्ट्राकण्टकारीभ्यां।
8. किमिनाशक यवागु - विडंगपिप्पलीमूलशिग्रुभिर्मरिचने ।
9. पिपासा नाशक यवागु - मृद्विकासारिवालाजपिप्पलीमधुनागरैः।
10. विष नाशक यवागु - सोमराजीविपाचिता ।
11. बृंहणी यवागु — सिद्धावराहनिर्युहे ।
12. कर्शनीयां यवागु - गवेधुकानां मृष्टानां कर्शनीया समाक्षिका ।
13. स्नेहनी यवागु — सर्पिष्मति बहुतिला स्नेहनी लवणान्विता ।
14. रूक्षणी यवागु — कुशामलकनिर्युहे श्यामाकानां।
15. श्वास कास नाशक यवागु - दशमूलीश्रृता कासहिक्काश्वासकफापहा ।
16. पक्वाशयगत वात नाशक यवागु - यमके मदिरासिद्धा ।
17. रेचनी यवागु - शाकेमार्सेस्तिलैर्माषैः ।
18. सांग्राहिकी यवागु - जम्ब्वाम्रास्थिदधित्थाम्लबिल्वैः।
19. भेदीनी यवागु - क्षारचित्रकहिंङ्ग्वम्लवेतसैर्भेदिनी ।
20. वातानुलोमनी यवागु - अभयापिप्पलीमूलविश्वैवातानुलोमनी।
21. घृतव्यापदनाशिनी यवागु — तकसिद्धा यवागुः।
22. तैलव्यापदनाशिनी यवागु — तक्रपिण्याकसाधिता ।
23. विषमज्वरनाशिनी यवागु - गव्यमांसरसैः साम्ला ।
24. कण्ठरोगनाशिनी यवागु — यवानां यमके पिपल्यामलकः श्रृता ।
25. शुक्रवहस्त्रोतोशूलनाशिनी यवागु — ताम्रचूडरसे सिद्धा ।
26. वृष्या यवागु — समाषविदला वृष्या ।
27. मदरोगनाशिनी यवागु — उपोदिकादधिभ्यां तु सिद्धा ।
28. क्षुधारोगनाशिनी यवागु - अपामार्गक्षीरगोधारसैः श्रृता ।

चिकित्सक की अहर्ताऐं -

स्मृतिमान् हेतु युक्तिज्ञो जितात्मा प्रतिपत्तिमान् । भिषगौषधसंयोगैश्चिकित्सां कर्तुमर्हति ।। च.सू. 2 / 36

चरक के अनुसार चिकित्सक की 5 अहर्ताऐं हैं स्मृतिमान ,हेतु ,युक्तिज्ञ, जितात्मा ,प्रतिपत्तिमान ।।

आरग्वधीय अध्याय

बहि:परिमार्जन द्रव्यों का वर्णन है। 32 सिद्धतम लेपों का वर्णन है।

15	कुष्ठनाशक	1	उदरशूल नाशक
4	वातविकार नाशक	1	पार्श्वशूल नाशक
3	वातरक्त नाशक	1	शीतनाशक
2	शिर:शूलनाशक	1	विषघ्न
2	दाहनाशक	1	स्वेदहर
		1	दुर्गन्धनाशक

कुष्ठनाशक लेप में भावना द्रव्य गोपित्त व सर्षप तैल होता है।

कुष्ठनाशक लेप -

मनःशिलाले मरिचानि तैलमार्क पयः कुष्ठहरः प्रदेहः ।

तुत्थविडंग मरिचानि कुष्ठं लौध्रं च तद्वतसमनःशिलं स्यात् ।

रसान्जनं सप्रपुनाडबीजं युक्तं कपिथस्य रसेन लेपः ।

करन्जबीजैडगजं सकुष्ठं गोमूत्रपिष्टं च परं प्रदेह ।

वातव्याधिनाशक लेप - आनूपमत्स्यामिषवेसवारैरूष्णै: प्रदेह पवनापह: स्यात् ।

स्नेहश्चतुर्भिर्दशमूलमिश्रैर्ग धोषधेश्चानिलहः।

उदरशूलनाशक लेप - तकेणयुक्तं यवचूर्णमुष्णं सक्षारमर्ति जठरे निहन्यात् ।

वातरक्तनाशक लेप - गोधूमचूर्ण छगलीपयश्च ।

शिर:शूलनाशक लेप - नतोत्पलं चन्दनकुष्ठयुक्तं शिरोरूजाया सघृतं प्रदेहः।

विषनाशक लेप - विषं शिरीषस्तु ससिन्धुवारः ।

स्वेदहर लेप - शिरीषलामज्जकहेमलौध्रेस्त्वगदोषहरः प्रघर्षः।

शरीरदुर्गन्धनाशक लेप - पत्राम्बु लोध्राभयचन्दनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रदेहः ।।

षड्विरेचनशताश्रितीय अध्याय

विरेचन द्रव्य - 600 । कषाय - 500 । महाकषाय - 50 । कषाय कल्पना - 5 । कषाय योनि - 5 ।
विरेचन द्रव्यों के आश्रय - क्षीरमूल त्वक् पत्र फलानीति ।।
पंचकषाय योनि - मधुर ,अम्ल ,कटु तिक्त ,कषाय । कषाय की लवण योनि नहीं होती है।
पंचविध कषाय कल्पना - स्वरसः कल्कः श्रृतः शीतः फाण्ट: कषाय इति । तेषां यथा पूर्व बलाधिक्यम् ।
अतः कषाय कल्पना व्याध्यातुरबलापेक्षिणी ।
वाग्भट ने भी कषाय कल्पना की संख्या 5 बताई हैं
पंचधैव कषायाणां पूर्व पूर्व बलाधिका ॥ वाग्भट
सुश्रुत ने कषाय कल्पना 6 बताई है। क्षीर स्वरस कल्क श्रृत शीत फाण्ट । यथोतर लाघवं प्रदीष्टा |सुश्रुत
काश्यप ने कषाय कल्पना की संख्या **7** बताई है स्वरस ,कल्क ,कषाय ,शीत ,फाण्ट ,चूर्ण , अभिसव ।।
पंचाशन्महाकषाया महतां च कषायाणां लक्षणोदाहरणार्थ व्याख्यता भवन्ति ।।
चरक के अनुसार प्रथम महाकषाय जीवनीय तथा अन्तिम महाकषाय वयस्थापन महाकषाय है।
चरक ने पाचनीय महाकषाय का वर्णन नहीं किया है।
चरक के अनुसार हन जैसे तृप्तिह्न आदि महाकषायों की संख्या 6 है । जनन व शोधन महाकषायों की संख्या 4 ,पग जैसे स्नेहोपग महाकषाय की संख्या 7 है ,निग्रह महाकषाय की संख्या 3 है, हर महाकषाय की संख्या 5 ,शमन महाकषाय की संख्या 5 ,तथा स्थापन महाकषाय की संख्या 5 है।
1 जीवनीय महाकषाय - जीवक ,ऋषभक ,मेदा ,महामेदा , काकोली ,क्षीरकाकोली मुद्गपर्णी ,माषपर्णी ,जीवन्ती व मधुक ।
भावप्रकाश का जीवनीय गण - चरक का जीवनीय महाकषाय व ऋद्धि, वृद्धि । कुल 12 द्रव्य ।
अष्टवर्ग - जीवक ,ऋषभक , मेदा, महामेदा , काकोली ,क्षीरकाकोली, ऋद्धि वृद्धि ।

1. बृंहणीय - अश्वगंधा, काकोली ,क्षीरकाकोली, भारद्वाजी (वनकार्पास) आदि ।
2. लेखनीय - मुष्तक कुष्ठ हरिद्रा वचा अतिविषा, कटुरोहिणी ।
3. भेदनीय - सुवहा (त्रिवृत), शकुलादिनी ,स्वर्णक्षीरी आदि
4. सन्धानीय - मधुक ,मधुपर्णी अम्बष्ठकी ,समन्गा ,मोचरस ।
5. दीपनीय - षडूषण (पिप्पली,पिप्पलीमूल, चव्य ,चित्रक ,नागर ,मरीच) BAAH (भल्लातकास्थि ,अजमोदा ,अम्लवेतस ,हिंगुनिर्यास)
6. बल्य - ऐन्द्री , ऋषभी (केवांच) ,स्थिरा (शालपर्णी), रोहीणी (जटामांसी) आदि ।
7. वर्ण्य - चन्दन ,उशीर ,मधुक ,मंजिष्ठा ,सारिवा, पयस्या आदि । हरिद्रा का वर्णन वर्ण्य महाकषाय में नहीं किया है।
8. कठ्य - सारिवा ,मधुक ,पिप्पली ,वृहती ,कण्टकारिका आदि ।
9. हृदय - आम्र ,आम्रातक ,लकुच ,करमर्द ,वृक्षाम्ल ,अम्लवेतस ,कुवल , बदर ,दाडिम , मातुलुंग ।
10. तृप्तिघ्न - नागर ,चव्य ,चित्रक ,विडंग आदि ।
11. अर्शोघ्न - कुटज ,बिल्व ,चित्रक ,अभया ,दारूहरिद्रा चव्य ,वचा आदि ।
12. कुष्ठघ्न - खदिर ,अरूष्कर ,सप्तपर्ण , आरग्वध ,अभया ,आमलकी ,हरिद्रा आदि ।
13. कण्डूघ्न - कृतमाल(आरग्वध), सर्षप आदि ।
14. कृमिघ्न - अक्षीव ,मरिच ,विडंग ,निर्गुण्डी ,आखुपर्णिका ।
15. विषघ्न - हरिद्रा ,मंजिष्ठा , सुवहा , शिरीष ,सिन्धुवार ,श्लेष्मातक ,सुक्ष्मैला , पालिन्दी ,चन्दन, कतक।
16. स्तन्यजनन - तृणपंचमूल के घटक शर को छोडकर ।
17. स्तन्यशोधन - इस गोरी सारिवा को M.D. M.S पति चाहिए । इन्द्रयव ,गुडुची ,सारिवा ,कुटकी ,मुस्तक ,देवादारू,मुर्वा ,शुण्ठी ,पाठा चिरायता ।
18. शुक्रजनन - जीवनीय महाकषाय के 7 द्रव्य (महामेदा ,जीवन्ति व मधुक को छोडकर) तथा जटिला ,कुलिंगा व शतावरी ।
19. शुक्कशोधन - समुद्रफेन आदि ।
20. स्नेहोपग - मृद्विका ,मधुक ,काकोली ,क्षीरकाकोली , जीवक ,जीवन्ति शालपर्णी आदि ।
21. स्वेदोपग - शोभान्जन आदि ।
22. वमनोपग - मधु ,मधुक कोविदार ,कर्बुदार आदि (कांचनार के भेदों का वर्णन)
23. विरेचनोपग - द्राक्षा ,काश्मर्य परूषक ,अभया ,आमलकी ,विभितक ,कुवल ,बदर ,कर्कन्धु ,पीलु (बेर की जातियों का वर्णन) ।
24. आस्थापनोपग
25. अनुवासनोपग - रास्ना ,मदनफल ,श्योनाक अग्निमंथ ,बिल्व गोक्षूर आदि ।
26. शिरोविरेचनोपग -
27. छर्दिनिग्रहण - मृल्लज (मृतिका)।
28. तृष्णानिग्रहण - गुडुची आदि ।
29. हिक्कानिग्रहण -
30. पुरीषसंग्रहणीय - मोचरस ,समंगा आदि।
31. पुरीषविरेचनीय - शल्लकी ,शाल्मली ,श्रीवेष्टक ,भृष्टमृतिका आदि ।

32. मूत्रसंग्रहणीय - भल्लातक आदि।
33. मूत्रविरंजनीय - कमल के भेदों का वर्णन है।
34. मूत्रविरेचनीय — गोक्षूर ,पुनर्नवा ,पाषाणभेद, दभ, कुश ,काश ,गुन्द्रा ,इत्कटमूल आदि ।
35. कासहर - द्राक्षा ,तामलकी आदि ।
36. श्वासहर - शटी (कचूर), तामलकी आदि ।
37. शोथहर - दशमूल के द्रव्य ।
38. ज्वरहर - सारिवा ,शर्करा ,पाठा ,मंजिष्ठा द्राक्षा ,पीलू,परूषक ,हरितकी ,विभितकी ,आमलकी ।
39. श्रमहर - द्राक्षा ,खजूर ,यव आदि ।
40. दाहप्रशमन —लाजा ,चन्दन ,गम्भारी ,मधूक ,शर्करा आदि ।
41. शीतप्रशमन - तगर ,अगुरू, धान्यक , श्रृंगवेर , आदि ।
42. उदर्दप्रशमन - खदिर ,कदर ,इरिमेद (खदिर की जातियों का वर्णन), अर्जुन ।
43. अंगमर्दप्रशमन - शालपर्णी ,पृश्नीपर्णी , वृहती ,कण्टकारी आदि ।
44. शूलप्रशमन - षडूषण GAAA(गण्डीर ,अजमोदा ,अजगंधा ,अजाजी)
45. शोणितस्थापन —मधु ,मधुक ,मोचरस ,रूधिर (कुंकुंम),गैरिक ,प्रियंगु ,शर्करा ,लाजा आदि ।
46. वेदनास्थापन - मोचरस, अशोक आदि। चरक के अनुसार अशोक का वर्णन वेदनास्थापन महाकषाय में है
47. संज्ञास्थापन - हिंगु ,अशोकरोहिणी आदि ।
48. प्रजास्थापन - ऐन्द्री ,ब्राम्ही ,शतवीर्या ,सहस्त्रवीर्या ,अव्यथा (हरितकी),शिवा (हरिद्रा),अरिष्टा (कुटकी) आदि ।
49. वय प्रजास्थापन - अभया ,अमृता ,धात्री ,मण्डूकपर्णी आदि ।
50. महाकषाय - नहि विस्तरस्य प्रमाणमस्ति,च चाप्यतिसडंक्षेपोऽल्पबुद्धिनां सामर्थ्यायोकल्पते ,तस्मादनति संडक्षेपेणानतिविस्तरेण चोपदिष्टाः।। च.सू. 4
एकोऽपि ह्यनेकां संज्ञा लभते " एक ही द्रव्य पृथक पृथक कार्य करता हुआ अलग अलग महाकषायों मे मिलता है।
चरक ने महाकषाय का वर्णन मंद बुद्धि व बुद्धिमान व्यक्ति दोनों के लिए किया है। मंदानां व्यवहाराय बुद्धानां बुद्धिवृद्धये ।।
तेषां कर्मसु बाह्येषु योगमाभ्यन्तरेषु च । संयोगं च प्रयोगं च यो वेद स भिषग्वर: |च.सू. 4/29

मात्राशितीय अध्याय

मात्राशी स्यात्। आहारमात्रापुनरग्निबलापेक्षिणी।। च.सू. 5/3
चरक के अनुसार आहार की मात्रा केवल अग्नि बल की अपेक्षा करती है जबकि वाग्भट् के अनुसार आहार की मात्रा अग्नि बल व आहार की गुरूता लघुता की अपेक्षा करती है।
1. लघु द्रव्य - वात और अग्नि - अग्नि दीपक।
2. गुरू द्रव्य - पृथ्वी और जल - दोष कारक।

चरक के अनुसार गुरू द्रव्यों का प्रयोग दोष कारक होने के कारण अधिक मात्रा में नहीं करना चाहिए। गुरू द्रव्यों का प्रयोग तीन भाग की तृप्ति अथवा दो भाग की तृप्ति अनुसार करना चाहिए। तथा लघु द्रव्यों का प्रयोग भी अधिक मात्रा में नहीं करना चाहिए।
नित्य के सेवन के अयोग्य - वल्लूर (शुष्क मांस), शुष्क शाक, शालूक (कमल की जड), बिस, तथा दुर्बल व्यक्ति को मांस, कुर्चिका (मठ्ठा), किलाट(फटा दूध) , शोकर (सूअर का मांस) , गौ मांस, माहिष मांस, मत्स्य, दधि मांष(उडद), यवक(जई), का निरन्तर सेवन निषेध है।
नित्य प्रयुक्त होने वाले द्रव्य - षष्टिक शाली , मुंग, सेंधव, आमलकी, यव , अन्तरिक्ष जल, घृत, जांगल मांस, मधु का प्रयोग नित्य करना चाहिए।

संतुलित आहार —
तच्च नित्यं प्रयुन्जीत स्वास्थ्यं सेवानुवर्तते। अजातानां विकाराणामनुत्पत्तिकरं च यत्।। च.सू. 5/13
स्वस्थवृत — चरक ने स्वस्थवृत का वर्णन मात्राशतीय अध्याय में किया है, जबकी सद्वृत का वर्णन इन्द्रियोपक्रमणीय अध्याय (च.सू. 8) में किया है।
अंजन - चरक के अनुसार नित्य प्रयुक्त अंजन -सौवीरंजन। रसांजन का प्रयोग चरक के अनुसार पांचवी का आंठवी रात्री में करते हैं। सुश्रुत के अनुसार नित्य प्रयुक्त अंजन - स्रोतोऽन्जन।

र.र.स. के अनुसार अंजन के पांच प्रकार हैं।
1. सौवीरंजन ($sb_2 S_3$) 2. रत्रौतोऽन्जन ($sb_2 S_3$)
3. रसांजन (Hgo) 4. पुष्पांजन (Zno) 5. नीलांजन (Pbs)

रस जल निधि ने अंजन के छ: प्रकार बताये हैं। कुलत्थाऽन्जन को अतिरिक्त माना है।
अंजन विशेष रूप से कफ नाशक होता है। ततः श्लेष्महरं कर्म हितं दृष्टे: प्रसादनम्।।
तीक्ष्णअंजन का प्रयोग दिन में निषेध है |स्त्रावण अंजन को प्रयोग सदैव रात्री में करना चाहिए।
ऋतु अनुसार अंजन प्रयोग काल - (शारंग्धर)
हेमन्त, शिशिर-मध्यान्न। ग्रीष्म, शरद - पूर्वान्ह, अपरान्ह। बसन्त में सदैव। वर्षा- बादल व उष्णता नही होने पर।
धूमपान - धूमवर्ति निर्माण में घटक द्रव्यों की संख्या - 34
धूमवर्ति की लम्बाई - 8 अंगुल। मोटाई - अंगुष्ठ प्रमाण। आकृति- यवसन्निभाम्।
चरक के अनुसार धूमवर्ति की लम्बाई -8 अंगुल।वाग्भट् -12 अंगुल। विदेहनिमि -6 अंगुल।
धूमवर्ति निर्माण के घटक द्रव्यों में तगर और कुष्ठ का प्रयोग नहीं करते हैं। इनका प्रयोग करने से मस्तुलुंग स्त्राव होने के कारण मृत्यु हो जाती है।

धूमपान का फलश्रुति - न च वातकफात्मानां बलिनोऽप्यूर्ध्वजत्रुजाः।
खालित्यं पिन्जरत्वं च केशानां पतनं तथा।।
सम्यक धुमपान के लक्षण -
हत्कण्ठेन्द्रियसंशुद्धिर्लघत्वं शिरस: शम:। यथेरितानां दोषाणां सत्यक् पीतस्य लक्षणम्।|च.सू. 5/37

यदा चोरश्च कण्ठश्च शिरश्च लघुतां व्रजेता। |च.सू. 5/52
धूमपान के उपद्रव - 1 बाधिर्य 2 आन्ध्य 3 मूकत्व 4 रक्तपित्त 5 शिरोभ्रम ।
धूमपानजन्य उपद्रव की चिकित्सा - तत्रेष्टं सर्पिष: पानं नावनान्जनतर्पणम्।।
धूमपान के अयोग्य व्यक्ति - विरेचन के बाद ,बस्ति के बाद ,रक्तपित्त ,विष से पिडित ,शोक से पीडित ,गर्भिणी ,तालुशोष व तिमिर के रोगी को धूमपान का निषेध है।
शिर , घ्राण व अक्षि रोगों में नासिका से धूम ग्रहण करते हैं जबकि कण्ठ रोगो में मुख से धूम ग्रहण करते है तथा ही अवस्थाओं में मुख से धूम का निर्हरण करें । नासिका से धूम का निर्हरण करने पर दृष्टि का विनाश हो जाता है।
प्रायोगिक धूमपान के काल - चरक ने प्रायोगिक धूमपान के काल 8 बताये है। स्नान ,भोजन ,वमन क्षवथु ,दातौन, नस्य ,अंजन ,निद्रा के बाद।
रोगास्तस्य तु पेयाः स्युरापानास्त्रित्रियस्त्रयः " चरक ने धूमपान 3 घूंठ 3 बार पीने का निर्देश किया है।
चरक के अनुसार एक दिन में प्रायोगिक धूमपान 2 बार ,नैंहिक 1 बार तथा विरेचनिक धूमपान एक दिन में 3-4 बार करते है।
सुश्रुत ने धूमपान के काल 12 बताये है। प्रायोगिक -4 ,स्नेहिक -5 ,विरेचनिक -3 ।
1 वाग्भट ने धूमपान के काल 24 बताये है। प्रायोगिक -8 ,स्नेहिक -11 ,विरेचनिक -5 ।
धूमनेत्र - चरक के अनुसार धूमनेत्र ऋजु ,त्रिकोष तथा इसका छिद्र कोलास्थि (बेर की गुठली) के समान होना चाहिए । प्रायोगिक धूमनेत्र 36 अंगुल ,स्नेहिक 32 अंगुल ,विरेचनिक 24 अंगुल होना चाहिए
1. सुश्रुत के अनुसार प्रायोगिक ,स्नेहिक व विरेचनिक धूमनेत्र की लम्बाई क्रमशः 48,32,24 अंगुल होती है।
2. वाग्भट के अनुसार प्रायोगिक ,नैंहिक व विरेचनिक धूमनेत्र की लम्बाई क्रमशः 40,32,24 अंगुल होती है।

अपीत धूमपान के लक्षण - अविशुद्ध स्वरो यस्य कण्ठश्च सकफो भवेत । स्तिमितो मस्तकश्चेवमपीतं धूममादिशेत ।।
अतिपीत धूमपान के लक्षण - तालु मूर्धाश्च कण्ठश्च शुष्यते परितप्यते ।
नस्य - प्रयोग - प्रावट ,शरद व बसन्त ऋतु ।
फलश्रुति - न च केशाः प्रमुच्यन्ते वर्धन्ते च विशेषतः। मन्यास्तम्भः शिरःशूलमर्दितः हनुसंग्रहः। पीनसार्धावभेदौ च शिर: कम्पश्च शम्यति ।
स्हसा उत्पन्न आस्य रोगों में हितकारी ।

अणु तैल निर्माण विधि -
चन्दागुरूणी पत्रं दार्वीत्वक मधुकं बलाम् ।..... आदि औषध द्रव्यों को 100 गुना माहेन्द्र जल में क्वाथ करते हैं तथा 10 वें पाक में अजा दुग्ध मिलाते है। प्रयुज्य मात्रा - अर्द्ध पल । हर तीसरे दिन प्रयुक्त करते है तथा कुल 7 बार प्रयुक्त करते है। इस प्रकार अणु तैल का कुल सेवन काल 13 दिन होता हैं।
दातौन - आपोथिताग्रं द्वौ कालौ कषायकटुतिक्तकम् ।
दातौन सेवन के काल चरक ने दो बताये हैं तथा दातौन का रस कटु ,तिक्त ,कषाय माना है।
चरक के अनुसार दातौन के लिए प्रयुक्त वृक्ष करन्ज ,करवीर ,अर्क ,मालती ,अर्जुन व असन है।
1. सुश्रुत ने रस के अनुसार दातौन का वर्णन किया है तथा मधुर रस में मधूक (महुआ) ,कटु में करंज ,तिक्त में निम्ब ,कषाय रस में खदिर को श्रेष्ठ माना है।

दातौन के लाभ - निहन्ति गंध वैरस्य जिव्हादन्तास्यजं मलम् ।
अन्जन शलाका ,जिव्हा निर्लेखनी ,दातौन का सामान्य प्रमाण क्रमशः 8,10,12 अंगुल होता है ।
जिव्हानिर्लेखनी - सुवर्ण, रजत, ताम्र ,कांस्य व पीतल द्वारा निर्मित ।
सुगन्धित द्रव्य धारण - जातिकटुकपूगाना लवंगस्य फलानि च । कक्कोलस्यं फलं पत्रं ताम्बूलस्य शुभं तथा तैलगण्डूष - फलस्तुति - न च दन्ताः क्षय यान्ति दृढमूला भवन्ति च । न शूल्यन्ते न चाम्लेन हृष्यन्ते भक्षयन्ति च ||

गण्डूष	**कवल**
असंचारी	संचारी
द्रव	कल्क

कर्णपूरण - न कर्णरोगा वातोत्था न मन्याहनुसंग्रह ।
अभ्यंग - स्पर्शनेऽभ्यधिको वायु: स्पर्शनं च त्वगाश्रितम् । त्वच्यश्च परभ्यंगस्तस्मातं शीलयेन्नरः ।।
पादाभ्यंग - खरत्वं स्तब्धता रौक्ष्यं श्रमः सुप्तिश्चः पादयोः । दृष्टि प्रसादं लभते ।
न च स्याद् गृध्रसीवातः पादयो स्फुटनं न च। न सिरास्नायु संकोच: पादाभ्यंगेन पादयोः ।।
शरीरमार्जन - दौर्गन्ध्यं गौरवं तन्द्रां कण्डूमलमरोचकम् । स्वेदवीभत्सतां हन्ति शरीरमार्जनम् ।
स्नान - पवित्रं वृष्यमायुष्य श्रमस्वेदमलापहम् । शरीरबलसन्धानं स्नानमोजस्करं परम् ।।
निर्मल वस्त्र धारण - काम्यं यशस्यमायुष्यं लक्ष्मीघ्नं प्रहर्षणम् । श्रीमत्पारिषदं शस्तं निर्मलाम्बरधारणम् ।। सुगन्धित द्रव्य धारण -वृष्यं सौगन्ध्यंमायुष्यं काम्यं पुष्टि बलप्रदम् । सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम् ॥
रत्न आभूषण धरण - धन्यं मंगल्यं आयुष्यं श्रीमद्यसनसूदनम् । हर्षणं काम्यमोजस्यं रत्नभरणधारणम् ।। पैरों तथा मलमार्गों की शुद्धि -मेध्यं पवित्रंमायुष्यमलक्ष्मीकलिनाशनम । |पादयोर्मलमार्गाणां शौचधानमभीक्ष्णशः॥

क्षौरकर्म - पौष्टिकं वृष्यंमायुष्यं शुचिरूपविराजनम्। केशश्मश्रुनखादिनां कल्पनं सम्प्रसाधनम् ।।
पादत्र धारण - चक्षुष्यं स्पर्शनं हितं पादयोर्व्यसनापहम् । बल्यं पराकमसुखं वृष्यं पादत्रधारणम् ।।
छत्रधारण - ईते प्रशमनं बल्यं गुप्त्यावरणशंकरम् । घर्मानिलरजोऽम्बुघ्नं छत्रधारणमुच्यते ।।
दण्डधारण - स्खलतः सम्प्रतिष्ठानं शत्रूणां च निषूदनं । अवष्टम्भनमायुष्यं भयहनं दण्डधारणम् ।।
नगरी नगरस्येव रथस्येव रथी यथा । स्वशरीरस्य मेधावी कृत्येष्ववहितो भवेत् ।। च.सू. 5/103
जिस प्रकार नगर का स्वामी नगर की तथा रथ का स्वामी रथ की रक्ष में सदैव तत्पर रहता है उसी प्रकार बुद्धिमान व्यक्ति को सदैव शरीर की रक्षा करनी चाहिए ।।

तस्याशितीय अध्याय

ऋतु चर्या का वर्णन
आहार के प्रकार - चरक / सुश्रुत - **4** अशित,पीत, लीढ़, खादित
शारंग्धर - 6 लेह, पेय, भक्ष्य, भोज्य, चर्व्य, चोष्य
संवस्तर - आदान काल (उत्तरायण)
विसर्गकाल (दक्षिणायन)
आदानकाल (आग्नेय) शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म ऋतु।
विसर्गकाल (सौम्य) - वर्षा, शरद, हेमन्त ऋतु।
आदान काल में कमशः वातावरण में रूक्षता की वृद्धि हो जाती है।

ऋतु	**स्वाभाविक रस**	**बल**	**रुक्षता**
शिशिर	तिक्त	कमी	वृद्धि
बसन्त	कषाय		
ग्रीष्म	कटु		

विसर्ग काल में क्रमश: वातावरण में स्निग्धता की वृद्धि होती है।

ऋतु	**स्वाभाविक रस**	**बल**	**रूक्षता**
वर्षा	अम्ल	वृद्धि	वृद्धि
शरद	लवण		
हेमन्त	मधुर		

सामान्य ऋतु विभाग	दोषानुसार ऋतु विभाग
माद्य- फाल्गुन - शिशिर	फाल्गुन चैत्र— बसन्त
चैत्र वैशाख - बसन्त	वैशाख ज्येष्ठ - ग्रीष्म
ज्येष्ठ आषाढ़ - ग्रीष्म	आषाढ़ श्रावण - प्रावर
श्रावण भाद्रपद - वर्षा	भाद्रपद अश्विन - वर्षा
अश्विन कार्तिक - शरद	कार्तिक मार्गशीष - शरद
मार्गशीर्ष पौष - हेमन्त	पौष माध - हेमन्त

शारंग्धर के अनुसार ऋतु विभाग -

मेष- वृषभ	ग्रीष्म
मिथुन - कर्क	प्रवर
सिंह - कन्या	वर्षा
तुला-वृश्चिक	शरद
धनु-मकर	हेमन्त
कुंभ - मीन	बसन्त

ऋतु के अनुसार दोषों का संचय, कोप, शमन

दोष	**संचय**	**कोप**	**शमन**
वात	ग्रीष्म	वर्षा	शरद
पित्त	वर्षा	शरद	हेमन्त
कफ	हेमन्त	बसन्त	ग्रीष्म

ऋतुओं के पर्याय
शरद - धारा धरात्यय / धनात्यय
बसन्त - कुसुमागम
हेमन्त - तुषार
वर्षा - धर्मात्यय
प्रावट (सु) - तापात्यय

ऋतुचर्या -

1हेमन्त ऋतु -शीते शीतानिलस्पर्शसंरूद्धो बलिनां बली।पक्ता भवन्ति हेमन्ते मात्रा द्रव्यगुरू क्षयः। च.सू. 6/9
शीतल काल में ऋतु वायु के स्पर्श से व्यक्ति की जठराग्नि प्रबल हो जाती है तथा यह गुरू आहार के पाचन में भी सक्षम हो जाती है।- जठराग्नि वृद्धि के फलस्वरूप हेमन्त ऋतु में धातु क्षय जन्य वात वृद्धि होती है। आहार — स्निग्ध, अम्ल, लवण रस, आनूप मांस।

- मधु का प्रयोग अनुपान के रूप में।
- हेमन्तेऽभ्यस्यत स्तोय मुष्णं चायुर्न हीयते। हेमन्त ऋतु में उष्णजल का सेवन करने से व्यक्ति की आयु का नाश नही होता।
- विहार - अभ्यंग, उत्सादन,मूर्ध तैल, जेन्ताक स्वेद
- उष्ण गर्भग्रह में निवास
- उष्ण अगुरू का लेप
- प्रकायं च निषेवेत मैथुनं शिशिरागमें।।

वर्जन - वर्जयेदन्नपानानि वातलानि लर्घुन च। प्रवातं प्रमिताहारंमुदमंथ हिमागमे।। च.सू. 6/18

2. शिशिर ऋतु -
   हेमन्त शिशिरो तुल्यौ शिशिरेऽल्पं विशेषणम्। रौक्ष्यंमादानजं शीतं मेघ मारूत वर्षजम्।। च.सू. 6/19
   शिशिर के लक्षण हेमन्त ऋतु के तुल्य ही होते हैं लेकिन आदान काल की रूक्षता मेघ, वायु,तथा पुष्टि के कारण शीतलता में वृद्धि हो जाती है। अतः उष्ण गृह में निवास करना चाहिए।
   वर्जन - कटुतिक्त कषायाणि वाततानि लघुनि च। वर्जयेत् अन्नपानानि शिशिरे शीतलानि च।। च.सू. 6/21
3. बसन्त ऋतु - हेमन्त ऋतु में संचित श्लेष्मा बसन्त में वातावरण की उष्णता से पिघल कर जठराग्नि को बाधित कर विविध विकारों की उत्पत्ति करता है। अतः बसन्त ऋतु में वमनादि कर्म करने का निर्देश है।
   वर्जन - गुर्वम्ल स्निध मधुरं दिवास्वप्नं च वर्जयेत।
   आहार-विहार - व्यायामोद्वर्तन धूमः कवलगृह अंजन। - चन्दन अगुरू का लेप।
4. ग्रीष्म ऋतु -
   आहार - मधुर, शीत, द्रव, स्निग्ध, अन्नपान।

- मंथ का प्रयोग - जांगल मांस - घृत, दुग्ध, आदि के साथ षष्टिक शाली।
  विहार - दिन में शीतल गृह में शयन तथा रात्री में चन्द्रमा की शीतल किरणों में।
- चन्दन का लेप - प्रवात का सेवन।
  वर्जन - मद्यं मल्पं न वा पेय मथवा सुबहुदकम्। लवणाम्ल कट्रष्णानि व्यायामं चात्र वर्जयेत् ।। च.सू 6/29

5. वर्षा ऋतु - आदाने दुर्बलेदेहे पक्ता भवति दुर्बलः।
   आदान काल में बल में कमी हो जाने से जठराग्नि दुर्बल हो जाती है तथा वातादि तीनों दोषों का प्रकोप हो जाता है। अतः वर्षा ऋतु को सर्व दोष प्रकोपक ऋतु कहते हैं। तथा सभी वस्तुओं का अम्ल विपाक हो जाता है।
   तस्मात् साधारणः सर्वो विधिवर्षासु शस्यते। अतः वर्षा ऋतु में सर्व दोष नाशक विधियों का प्रयोग प्रशस्त होता है।
   आहार विहार - सभी पान व भोज्य पदार्थों में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए।
   पुराण जांगल मांस सेवन हितकारी

- नदी जल को छोडकर शेष सभी जल ग्राह्य
- प्रघर्षो इर्तने स्नान गंध माल्यपरो भवेत्।
- वर्जन - उदमंथ दिवास्वपनंवश्यायं नदीजलम्। व्यायामातपं चैव व्यवायं चात्र वर्जयेत्।। च.सू 6/35

6. शरद ऋतु -

- आहार -विहार - पित्तशामक आहार विहार मधुर, लघु, शीत, तिक्त द्रव्यों का प्रयोग , तिक्त घृत का प्रयोग।
- वर्जनः - आतपस्य च वर्जनम्। वसा तैल अवश्याय आनूप मांस वर्जित, क्षार, दधि, दिवास्वपन, प्राग्वात्
- हंसोदक - शरद ऋतु का जल हंसोदक कहलाता है।
- " दिवासूर्यांशु संतप्तं निशि चन्द्राशुं शीतलम्।"
- सुश्रुत ने हंसोदक का नहीं किया है । भा. प्र. ने अंशुदक के नाम से वर्णन किया है।
- ओकसात्म्य - उपशेते यदौचित्यादोकः सात्म्यं तदुच्यते।।
- जो आहार विहार सतत् सेवन करने से सात्म्य हो जाता है उसे ओकसात्म्य कहते हैं।
- सात्म्य के भेद -4 ऋतु, ओक, देश, रोग।

न वेगान् धारणीय अध्याय

चरक, सुश्रुत व वाग्भट् के अनुसार अधारणीय वेगों की संख्या 13 हैं।
चरक अधारणीय वेगः अधोमार्ग : मूत्र, पुरीष, रेतस, अपान-4
मुख : छर्दि, उद्गार, जृम्भा, क्षुधा, पिपासा-5
नेत्र : वाष्प, निद्रा—2
नासिका : क्षवथु , निश्वास-2
वाग्भट्:- वेगान्नधारयेत् वात विड्मूत्र क्षवतृट्क्षुधाम्। निद्रा कास श्रमश्वास जृम्भाश्रुछर्दि रेतसाम्।।
वाग्भट् ने उद्गार के स्थान पर कास माना है।

अधारणीय वेग	लक्षण	चिकित्सा
1. मूत्र	बस्तिमेहनशूल, मूत्रकृच्छ, शिरोरूजा, विनाभ, वंक्षण	स्वेदन, अवगाहन, अभ्यंग,
2. पुरीष	पक्वाशय, शूल, शिरःशूल, वातवर्च, अप्रवृति, पिण्डिका उद्वेष्टन, आध्मान	स्वेदन, अभ्यंग, अवगाहन, वर्ति, बस्तिकर्म, प्रमाथी अन्न।
3. शुक	मेढ्र वृषण शूल, अंगमर्द, हृदिव्यथा, मूत्रविबंध	अभ्यंग, अवगाहन, मदिरा, चरणायुधा, निरूहबस्ति।
4. अपान	विष्मूत्र अवरोध, आध्मान, वेदना, क्लम	स्नेहन, स्वेदन, वर्ति, वातहर, बस्ति, वातानुलोमक, अन्न
5. छर्दि	कण्डु, कोठ, अरूचि, व्यंग, शोथ, पाण्डु, ज्वर, कुष्ठ, हल्लास, विसर्प	भुक्त्वा प्रछर्दनं धूम, लंघन, रक्तमोक्षण, रूक्षअन्नपान, व्यायाम, विरेचन।
6. क्षवथु	मन्यास्तम्भः शिरः शूल अर्दित, अर्द्धावभेदक इन्द्रिय दोर्बल्य	उर्ध्वजत्रुगत अभ्यंग, स्वेद, धूम, हितं वातहनं आद्यं घृत चौतर मस्तिकम्।
7. उद्गार	हिक्का, श्वास, अरूचि, कम्प,हृदयविबंध, उर:विविधं।	हिक्कातुल्य औषध
8. जृम्भा	विनामः आक्षेप, संकोच, सुप्ति, कम्प, वेपन	सर्व वातहनं औषधम्।
9. क्षुधा	कार्श्य, दौर्बल्य, वैवर्ण्य, अंगमर्द, अरूचि, भ्रम	स्निग्ध, उष्ण, लघु भोजन
10. पिपासा	कण्ठस्यशोष, बाधिर्य, श्रम, साद, हृदिव्यथा	शीतल, तर्पण पदार्थ
11. वाष्प	प्रतिश्याय ,अक्षिरोग , हृदयरोग ,अरूचि ,भ्रम	स्वप्न ,मद्य, प्रियकथा ।
12. निद्रा	जृम्भा, अंगमर्द , तन्द्रा , शिरोरोग ,अक्षिरोग ।	स्वप्नं संवाहनानि च ।
13. श्रम निश्वास	गुल्म, हृदयरोग , सम्मोह	विश्राम वातघ्नश्च किया हिता।

धारणीय वेग - चरक ने धारणीय वेगों की संख्या 18 बताई है।
मानसिक -9 , वाचिक -5 , कायिक -4

व्यायाम -

शरीर चेष्टा या चेष्टा स्थैयार्था बलवर्धनी । देहव्यायाम संड.ख्याता मात्र्यां तां समाचरेत।। च.सू. 7/31

शरीर की जो चेष्टा मन की स्थिरता व बल को बढाने के लिए की जाती है उसे व्यायाम कहते हैं।
व्यायाम के लाभ - स्वेदागम श्वास वृद्धि, गात्रलघुता, हृदय अवरोध (सम्यक व्यायाम के लक्षण)
लाघवं कर्म सामर्थ्य स्थैर्य दुख सहिष्णुता। दोषक्षयो ऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुप जायते।। च.सू. 7/32
सुशुत - व्याधयो नोपसर्पन्ति सिंह क्षुद्र मृगाइव। वयोरूपगुणैर्हीन मपि कुर्यात सुदर्शनम्।/सु.चि 24

अधिक व्यायाम से हानि-

श्रमकलमः क्षय स्तृष्णा रक्तपितं प्रतामकः |अति व्यायामतः कासो ज्वरश्छर्दिश्च जायते।। च.सू. 7/31
व्यायाम, हास्य, भाष्य, अध्व, ग्राम्यधर्म, प्रजागरण- 6 कर्मों का अधिक सेवन करने पर उसी प्रकार मृत्यु हो जाती है जिस प्रकार गजधारीसिंह गज को खींचने पर मर जाता है।

" गज सिंह इवाकर्षन् सहसा स विनश्यति।।"

चरक ने पादांशिक क्रम का वर्णन इस अध्याय में किया है और पादांशिक कम 7 दिन का बताया है। वाग्भट् - 14 दिन

पादांशिक क्रम का लाभ - क्रमेणापचिता दोषा: क्रमेणोपचिता गुणाः।।

—समपित्तऽनिलकफा केचिद् गर्भादि मानवाः। वातलाद्या: सदातुराः। च.सू. 7/40

वातिकाद्या: सदातुराः।। काश्यप

स्वास्थयवर्धक विधी:

विपरीत गुणस्तेषां स्वस्थवृते विधिर्हितः।।
मलायन - चरक ने मलायन की संख्या 10 बताई है। द्वे अध: सप्त शिरसि खानि स्वेदमुखानि च।।
दोषनिर्हरण काल-माधवे प्रथमे मासि नभस्य प्रथमे पुनः ।सहस्य प्रथमे चैव हारयेद् दोष संचयम्।। च.सू. 7/46

दोष	निर्हरण काल	
V	श्रावण	S
P	टगहन	A

आप्तोप्देश लाभः
आप्तोपदेश प्रज्ञानं प्रतिपतिश्च कारणम्। विकाराणा मनुत्पत्तावुत्पन्नानां च शान्तये ।। च.सू. 7/55
दहिसेवन के नियमः
न नक्तं दधि भुजित न चाप्य घृत शर्करम। नामुद्ग युषं नाक्षौद्रं नोष्णं नामलकैर्विना ।। च.सू. 7/61
दहि का प्रयोग रात्री में नहीं करना चाहिए। तथा घृत, शर्करा, मुग, यूष, मधु, आमलक मिलाए बिना तथा उष्ण करके नहीं करना चाहिए। नियम विरूद्ध दहि सेवन करने से निम्न रोगों की उत्पत्ति होती है ज्वर, रक्तपित्त, वीसर्प, कुष्ठ, पाण्डु, भ्रम व कामला ।

इन्द्रियोपक्रमणीय अध्याय

इन्द्रिय पंच पंचक- पंच इन्द्रिय, पंच इन्द्रिय द्रव्य, पंच इन्द्रिय अधिष्ठान, पंच इन्द्रिय अर्थ, पंच इन्द्रिय बुद्धि।
मनः- अति इन्द्रियं पुनर्मनः। सत्वसंज्ञक चेत इत्या हुरेके।
चेष्टां प्रत्यय भूतं मिन्द्रियाणाम्।
मनः पुरः सराणीन्द्रियाण्यर्थ ग्रहण समर्थानि भवन्ति। मन जिस प्रकार इन्द्रियार्थ ज्ञान के लिए प्रवृत होती है।

पंचज्ञानेन्द्रियां	इन्द्रिय द्रव्य	इन्द्रिय अधिष्ठान	इन्द्रियार्थ	इन्द्रिय बुद्धि
1. चक्षु	ज्योति (तेज)	अक्षि	रूप	चक्षु बुद्धि
2. स्त्रोत	खं (आकाश)	कर्ण	शब्द	श्रोत्र बुद्धि
3. घ्राण	भू (पृथ्वी)	नसिका	गंध	घ्राण बुद्धि
4. रसन	आप् (जल)	जिव्हा	रस	रसन बुद्धि
5. स्पर्शन	वायु	त्वक्	स्पर्श	स्पर्श बुद्धि

चरक के अनुसार बुद्धि के भेद 5 इन्द्रिय बुद्धि, 2 क्षणिका व निश्चियात्मिका, असंख्य
आध्यात्म द्रव्य गुण संग्रह मन मनोऽर्थ बुद्धिरात्मा चेत्यध्यात्म द्रव्य गुण संग्रहः। शुभाशुभप्रवृतिनिवृति हेतु ।। चरक न्याय व वेदान्त दर्शन के अनुसार इन्द्रियों पांचभोतिक होती है।
सांख्य व सुश्रुत के अनुसार इन्द्रियां अंहकारिक होती है।
मनसस्तु चिन्त्यमर्थः मन का विषय चिन्त्य है।
तत्र मनसो मनो बुद्धिश्च त एक समानातिहीनमिथ्या योगा प्रकृति विकृति हेतवो भवन्ति ।। च.सू. 8/16
सदवृत का वर्णन चरक ने इस अध्याय में किया है। सदवृत का पालन करने से अर्थ द्वय की प्राप्ती होती है।
आरोग्य, इन्द्रिय जय।
चरक ने स्नान के 2 काल बताये हैं। प्रातः व सांय।
चरक ने पक्ष के तीन बार केश, श्मश्रु, लोम, नखकर्तन का निर्देश दिया है। चरक ने इन्द्रिय पंचपंचक व हेतु चतुष्ट्य का वर्णन इन्द्रियोपकृमणीय अध्याय में किया है।

खुडड़ाक चतुष्पाद अध्यायः

चिकित्सा के चार पाद :-
भिषक द्रव्यानुपस्थाता रोगी पाद चतुष्ट्यम्। गुणवत् कारणं ज्ञेयं विकारा व्युपशान्तये ।। च.सू. 9/3
चरक ने चिकित्सा के चतुष्पाद में भिषक (चिकित्सक) को प्रथम तथा रोगी को अन्तिम स्थान पर रखा हैं।

सुश्रुत : -
वैघोव्याघ्युप सृष्टश्च भेषजं परिचारकः। एते पादाश्चिकित्सायाः कर्म साधन हेतवः ।। सु. सू. 34/15 सुश्रुत ने चिकित्सा के चतुष्पाद में चिकित्सक को प्रथम तथा परिचारक को अन्तिम स्थान पर रखा है।
विकारौ धातु वैषम्यं साम्यं प्रकृतिरूच्यते। सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारो दुखमेव च ।। च.सू. 9/4
रोगस्तु दौष वैषम्य दोष साम्यं आरोग्यता वाग्भट् ।।

चिकित्सा प्रथम परिभाषा
चतुर्णां भिषगादीनां शस्तानां धातु वैकृते। प्रवृतिर्धातु साम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते ।। च.सू. 9/5
धातुओं के विकृत हो जाने पर चिकित्सा के चतुष्पादों के द्वारा धातुओं को साम्य करने हेतु जो किया की जाती है उसे चिकित्सा कहते है।

चिकित्सा के गुण -
1. श्रुते पर्यवदातत्वं शास्त्र का सर्व ज्ञान।
2. दृष्टकर्मता प्रत्यक्ष दृष्टा।
3. दाक्ष्य दक्षता ।
4. शौच पवित्रता।

द्रव्य के गुण
1. बहुता पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होना।
2. योग्यत्व रोगनाशक शक्ति ।
3. अनेक विधकल्पना अनेक प्रकार से निर्माण।
4. सम्पत्- सभी गुणों का होना।

परिचारक के गुण -
1. उपचारज्ञता- चिकित्सा का ज्ञान होना।
2. दाक्ष्य दक्षता ।
3. अनुरागश्च भर्तरि रोगी के प्रति प्रेम।
4. शौच पवित्रता ।

रोगी के गुण

1. स्मृति स्मरण शक्ति वाला।
2. निर्देशकारित्व निर्देशों का पालन करने वाला।
3. अभीरू डरने नहीं वाला।
4. ज्ञापकत्व रोग के बारे में जानने वाला।

कारणं षोडशगुणं सिद्धौ पाद चतुष्ट्यम्। विज्ञाता शासिता योक्ता प्रधानं भिषगत्र तु ।। च.सू. 9
चिकित्सक चतुष्पाद में ज्ञाता और शासक होने के कारण श्रेष्ठ होता है।

प्राणाभिसर वैद्य 4 गुण

तस्मात् शास्त्रेऽर्थविज्ञाने प्रवृतौ कर्म दर्शने। भिषक् चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसर उच्चते ।।
शास्त्र अध्ययन, शास्त्र ज्ञान, प्रत्यक्ष कर्म, प्रत्यक्ष दर्शन।

राजवैद्य - 4 गुण

हेतु लिंग प्रशमने रोगााणामपुनर्भवे।
जिस वैद्य को रोग के हेतु, लक्षण, शमन के उपाय तथा पुनः उत्पत्ति ना होने के कारण का ज्ञान हो ।
शस्त्र शास्त्राणि सलिलं गुण दोष प्रवृतये। पात्रा पेक्षिण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थ विशोधयेत ।। च.सू. 9/20
शस्त्र, शास्त्र, व सलिल तीनों गुण व दोष की प्रवृति के लिए पात्र की अपेक्षा करते हैं।
उत्तम चिकित्सा के गुण (V3ST किया)
विद्या, वितर्क, विज्ञानं, स्मृति, तत्परता किया।
शास्त्र, ज्योतिः प्रकाशार्थ दर्शनं बुद्धि रात्मनः। ताभ्यां भिषक् सुयुक्ताभ्यां चिकित्सन् नापराध्यति ।। च.सू. 9/24
शास्त्र ज्योति स्वरूप है। तथा बुद्धि दृष्टि स्वरूप है इसलिए शास्त्र व बुद्धि से युक्त वैद्य चिकित्सा में अपराध नहीं कर सकता है।
वैद्य वृतियां मैत्री कारूण्यमार्तेषु शक्ये प्रीतिरूपेक्षणम्। प्रकृतिस्थेषु भूतेषु वैधवृतिश्चतुर्विधा ।। च.सू. 9/26
आचार्य चरक ने वैद्य की 4 वृतियां या ब्राह्मी बुद्धि मानी है।
1 मैत्री 2 आर्तेषु कारुण्य (रोगी के प्रति कारुण्य) 3 शक्येप्रीती (साध्य रोग से स्नेह) 4 उपेक्षणम् प्रकृति स्थेषुः (असाध्य रोग की उपेक्षा)

महाचतुष्पाद अध्याय

तुष्पाद षोऽशकलं भेषजंमिति भिषजोभाषन्ते ।
चिकित्सा के चार पाद व सोलह कलाओं से युक्त होती है।
मैत्रेय की शंका:- कुशल चिकित्सक, उपकरण, परिचारक तथा रोगी के आत्मवान होते हुए भी कुछ रोगी लाभान्वित होते हैं।जबकि कुछ की मृत्यु हो जाती है ऐसा क्यों होता है?
आत्रेय का समाधान - चतुष्पाद गुण सम्पन्न होते हुए भी कुछ रोगी मृत्यु को प्राप्त होते है क्योंकि असाघ्य रोगों की चिकित्सा नहीं होती।
अतः कुशल चिकित्सक वो ही होता हे जो रोगी की परिक्षा करने के पश्चात ही चिकित्सा प्रारम्भ करता है।
("परीक्ष्य कारिणो हि कुशला भवन्ति")
असाध्य रोगों की चिकित्सा करने से सदैव 5 भावों का ह्रास होता है।
" अर्थ विद्या यशो हानिमुपकोशसंग्रह।।"
अर्थ, विद्या, यशहानि, उपकोश (समाज में निंदा) व असंग्रह (रोगियों का संग्रह नहीं होता।)

साध्य व असाध्य रागों के भेद :

सुखसाध्यंमत साध्यं कृच्छ साध्य मथापि च। द्विविधं चाव्य साध्यं स्थाद् याप्यं यच्चानुकुम।।
साध्यानां त्रिविधश्चाल्प मध्यमोत्कृष्टतां प्रति। विकल्पो न त्वासाध्यानां नियतानां विकल्पनां।। च.सू. 10/10
साध्य रोग : - 2 भेद - सुखसाध्य, कृच्छसाध्य
असाध्य रोग :- 2 भेद - याप्य , अनुपक्रम
पुनः साध्य रोग -3 भेद - अल्पउपाय साध्य, मध्य उत्कृष्ट उपाय साध्य।
निश्चित रूप से असाध्य (अनुपक्रम)- व्याधियों का कोई विकल्प नहीं होता हैं।

1. सुख साध्य रोगों के लक्षण -

- हेतु पूर्वरूपाणि रूपाण्यल्पानि यस्यच।
- न च तुल्य गुणो दूष्यो न दोष प्रकृतिर्भवेत।
- न च काल गुणस्तुल्यो न देशो दुरूपक्रमः।
- गतिरेका नवत्वं च।
- रोगस्योपद्रवा न च।
- दौषैश्चैक: समुत्पतौ।
- देह सर्वोषध क्षमः।

: चतुष्पादोपपतिश्च सुखसाध्य लक्षणम्।

2. कृच्छसाध्य रोगों के लक्षण -

- निर्मित्त पूर्वरूपाणां रूपाणां मध्यमे बले।
- काल प्रकृति दूष्याणां सामान्येऽन्यतमस्य च।
- गर्भिणी वृद्ध बालानां नात्युपद्रवपीडितम्।
- शस्त्रक्षाराग्नि कृत्यनामनवं कृच्छदेशजम्।
- विद्यादेकपथं रोगं नातिपूर्ण चतुष्पदम्।
- द्विपथं नाति कालं वा, द्विदोषजम्।

3. याप्य रोगों के लक्षण -

- शेषत्वादायुषो याप्यं साध्यं पथ्यसेवया।
- लब्धाल्प सुरवं मल्पेन हेतुनांऽशुप्रवर्तकम्।
- गंभीर बहुधातुस्थं
- मर्म संधि समाश्रितम्।
- नित्यानुशायिनं रोगं दीर्धकालवस्थितम्।

4. प्रत्याख्येय रोगों के लक्षण

- त्रिदोषजम् ।
- क्रियापथंमति कान्तं।
- सर्वमार्गानुसारिणं।
- औत्सुक्यारति, सम्मोहकर इन्द्रिय नाशनम्।
- दुर्बलस्य सुसंवृद्धं व्याधि सारिष्टमेव च।

जो वैद्य साध्य असाध्य के भेद को जानता है वह मत्रेय के समान मिथ्या बुद्धि नहीं रखता।

तिस्त्रेषणीय अध्याय

इस लोक व परलोक में हित की रक्षा रखने वाले व्यक्ति को 3 ऐषणाओं की पूर्ति का प्रयत्न करना चाहिए। — प्राणैषणा, धनैषणा, परलौकेषणा भेल के अनुसार तीन ऐषणाएं -प्राणैषणा, धनैषणा, धर्मेषणा।

1. प्राणैषणा - प्राणैषणा पूर्वतर।

- प्राणपरित्यागे हि सर्वत्यागः।
- स्वस्थस्य स्वस्थवृतानुवृति आतुरस्यविकार प्रशमनेऽप्रमादः।

2. धनैषणा: - उपकरण रहित दीर्घायु पुरूष से बढकर कोई पापी नहीं है।

- न ह्मतः पापात् पापी योऽस्ति।

3. परलौकेषणा - इस लोक के बाद कहां होगें यही परलौकेषणा है।

कुछ आचार्य माता पिता को जन्म में कारण मानते है कुछ स्वभाव को , परनिर्माण को, तथा कुछ यदृच्छा को जन्म में कारण मानते हैं

- चरक ने चतुर्विध प्रमाणों से पुनर्जन्म की सिद्धि की है।
- " प्रत्यक्षं ह्मल्पम अनल्पप्रत्यक्षमस्ति। यदागमनुमान युक्तिभिरूपलभ्यते।।

प्रत्यक्ष ज्ञान में बाधक कारण -8

1. अतिसन्निकर्षात्
2. अतिविप्रकर्षात
3. आवरणात्
4. करण दौर्बल्यात्
5. मनोवस्थानात्
6. समानाभिहारात्
7. अभिभवात्
8. अतिसौक्ष्म्यात्।

चरक के अनुसार यदृच्छावादी के समान कोई पापी नहीं है।

" पातकेभ्यः परं चैततपातकं नास्तिकग्रहः"

चतुर्विध परिक्षा - द्विविधंमेव खलु सर्व सच्चासच्चं तस्य चतुर्विध परीक्षा आप्तोपदेशः प्रत्यक्षम् अनुमानं युक्तिश्चेति।।

1. आप्तोपदेशः - आप्त - रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तास्तपोज्ञान बलेन ये येषां त्रिकाल्ममलं ज्ञान व्याहतं सदा आप्त पुरूष के पर्याय - शिष्ट, विबुद्ध।
2. प्रत्यक्ष: -

   आत्मेन्द्रिय मनोऽर्थानां सन्निकर्षात् प्रवर्तते। व्यक्ता तदात्वे या बुद्धि: प्रत्यक्षं सा निरूच्यते।।

   आत्मा इन्द्रियः मन व इन्द्रियार्थों के द्वारा जो बुद्धि व्यक्त होती है उसे प्रत्यक्ष कहते हैं।

   तर्क संग्रह के अनुसार - इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष जन्य ज्ञानं प्रत्यक्षं ।

इन्द्रिय सन्निकर्ष 6 प्रकार के होते हैं।

1. संयोग - चक्षु का घडे के साथ
2. संयुक्त समवाय - चक्षु का घडे के रूप के साथ।
3. संयुक्त समवेत समवाय - चक्षु का घडे के रूप के रूपत्व के साथ।
4. समवायः - श्रोत्रेन्द्रिय का शब्द के साथ।
5. समवेत समवाय - श्रोत्रेन्द्रिय का शब्दत्व के साथ।
6. विशेषण विशेष्याभाव: - भूमि पर घडें का अभाव।

3. **अनुमानः -** प्रत्यक्ष पूर्व त्रिविधं त्रिकालं चानुमीयते'' प्रत्यक्ष को आधार मानकर तीनों कालों का अनुमान किया जाता है।
1. वहिन निर्गूढो धूमेन - धूम को देखकर अग्नि का अनुमान - वर्तमान काल। (सामान्यतो दृष्ट)
2. मैथूनं गर्भदर्शनातः - गर्भ को देखकर मैथून का अनुमान- भूतकाल (शेषवत्)
3. बीजात् फलमनागतम् - बीज को देखकर आने वाले फल का अनुमान - भविष्य काल (पूर्ववत)

न्याय दर्शन न अनुमान के 3 भेद बताये हैं
1. पूर्ववत - भविष्य काल
2. शेषवत् - भूतकाल
3. सामान्यतो दृष्ट - वर्तमान काल

4. **युक्ति प्रमाण: -** बुद्धि पश्यति या भावान् बहुकारण योगजान्। जिन भावों को देखती है उस त्रिकाल ज्ञान कारक बुद्धि को युक्ति कहते हैं।
   उदाहरण - जल, कर्षितभूमि, बीज, ऋतु, के संयोग से फसल की उत्पत्ति, षड्धातु के संयोग से गर्भ की उत्पत्ति, मंथ, मंथन, मंथान के संयोग से अग्नि की उत्पत्ति उसी प्रकार चिकित्सा के चतुष्पाद सम्पन्न होने पर व्याधि की शान्ति होती है।

- **तीन उपस्तम्भ :-** आहार स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति।
  संस्कार महितम नुपसेवमानस्य- शरीर के प्रति जो अहितकर आहार-विहार है उनका सेवन न करना ही संस्कार है।
  त्रिविध बल :- सहजं कालजं युक्तिकृतं च।
- त्रीण्यायतनानीति (तीन आयतन) - अर्थानां कर्मणः कालस्य चातियोगायोगमिथ्या योगाः। इन्द्रियार्थ, कर्म व काल का अतियोग, अयोग व मिथ्या योग होना।
  चरक के अनुसार प्रधान इन्द्रिय दर्शनेन्द्रिय है जबकि व्यापक इन्द्रिय स्पर्शनेन्द्रिय है।
  चरक के अनुसार कुल असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग की संख्या 15 होती है।
  प्रज्ञापराध के भी 3 विकल्प होते हैं। कायिक, वाचिक, व मानसिक कर्मों का अतियोग, अयोग व मिथ्या योग।
- तीन रोग - त्रयोरोगा इति निज आगन्तुक मानसाः।
  निज : - शरीर दोष समुत्थ।
  आगन्तुज - विष वायुउग्नि सम्प्रहारादि समुत्थ।
  मानसिक - इष्ट लाभऽलाभाच्चानिष्ट स्योपजायते।
  मानसिक रोग की चिकित्सा हेतु " त्रिवर्गस्यान्वेक्षणम्" अर्थात त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) का विधिपूर्वक पालन करें।
  त्रिरोग मार्ग - शाखा, मर्मास्थि संधि, कोष्ठ।
  1. बाह्य रोग - शाखा रक्तादयो धातुस्त्वक् च।
  2. मध्यम रोग मार्ग - मर्माणि पुनर्बस्तिहृदय मुर्धादीनि। अस्थि सन्ध्योऽस्थि संयोगास्तत्रोपनिबद्ध स्नायु कण्डराः।।
  3. अन्तः रोगमार्ग - कोष्ठ/ महास्त्रोतस/ मध्य भाग / महानिम्न /आमाशय / पक्वाशय

1. **बाह्यरोग मार्ग के रोग - 14**
   गलगण्ड, पीडिका, अलजी, अपची, चर्मकील, अधिमांस, मषक, कुष्ठ, व्यंग, विद्रधी , अर्श , विसर्प, शोथ, **गुल्म।**
2. **मध्यम मार्ग के रोग -11**
   पक्षवध, अपतानक, अर्दितः, शोष, राजयक्ष्मा, अस्थिशूल, संधिशूल, गुदभृंश, शिरोरोग, हृदयरोग, बस्ति रोग।
3. **कोष्ठगत रोग/आभ्यान्तर रोग मार्ग के रोग - 16**
   ज्वर, अतिसार, छर्दि, अलसक, विसूसिका, कास , श्वास, हिक्का, आनाह, उदर, प्लीहा, विद्रधी, अर्श, विसर्प, **शोथ, गुल्म।**

त्रिविध भिषज: -1 छद्मचर 2 सिद्धसाधित 3 जीविताभिसर
1. छद्मचर - वैद्य भाण्डौषधैः पुस्तैःपल्ववैरवलौकनेः।
2. सिद्धसाधित - श्रीयशो ज्ञान सिद्धानां व्यपदेशवतद्विधाः।
3. जीविताभिसरः - प्रयोग ज्ञान विज्ञान सिद्धि सिद्धा सुखप्रदा।

त्रिविध औषधः - देवव्यापाश्रय ,युक्ति व्यापश्रय, सत्वावजय।
व्यापाश्रय भेद से औषध -2 - दैवव्यापाश्रय, युक्तिव्यापाश्रय
सत्वाजयः - पुनरहितेभ्योऽर्थेभ्यो मनोनिग्रह।
त्रिविध औषध - अन्तः परिमार्जन , बहि:परिमार्जन, शस्त्र प्रणिधान।
अणुहि प्रथमंभूत्वा रोग: पश्चाद विवर्धते। स जातमूलो मुष्णाति बल मायुश्च दुर्मते।। च.सू. 11/58
रोगी का रोग प्रारम्भ में छोटा होने पर भी बाद में अपनी जड़ जमाकर धीरे धीरे बढता जाता है तदन्तर वह रोग उस व्यक्ति के बल व आयु का विनाश कर देता है।
" त्रित्वेनाष्टौ समुदिष्टाः कृष्णात्रेयेण धीमता" कृष्ण आत्रेय का वर्णन च.सू. 11 में आया है।
(अष्टत्रिक का वर्णन चरक ने इस अध्याय में व मदात्यय चिकित्सा में किया है।)

वातकलाकलीय अध्याय

द्वितिय सम्भाषा का वर्णन इस अध्याय में है।

- वात, पित्त , कफ के गुण दोषों से संबंधित है।
- इस सम्भाषा में 8 आचार्यों ने भाग लिया।

1. कुशः - वात के गुणों का वर्णन किया, वात के 6 गुण बताये हैं। रूक्ष, लघु शीत, दारूण, खर, विशद। वात के सुक्ष्म व चल गुण के स्थान पर दारूण माना है।
2. कुमार शिरा भारद्वाज - वात के प्रकोप के कारण बताये हैं। "समान गुणाभ्यासो हि धातुनां वृद्धि कारणमिति।।
3. कांकायन - वात के संशमन के कारण बताये हैं। " अतो विपरीतानि वातस्य प्रशमनानि भवन्ति"।
4. बडिश धामार्गव - वात के कोप व शमन की प्रक्रिया का वर्णन किया है।
5. वायोर्विद - कुपित, अकुपित, शरीरगत- अशरीरगत वायु के कर्मों का वर्णन किया है।
    1. अकुपित शरीरगत वायु — वायुस्तन्त्र यन्त्रधर, प्राणोदान समान व्यानापानात्मा, प्रवर्तक श्रेष्टा नामुच्चावचानां, नियन्ता प्रणेता च मनसः, सर्वेन्द्रियाणांमद्योजकः, सर्वेन्द्रियार्था नामभिवोढा, सर्व शरीर धातु व्युहकर, संधानकर शरीरस्य, श्रोत्रस्पर्शनयोर्मूलं, हर्षोत्साहयोर्योनि, समरिणोऽग्ने, दोष संशोषण, क्षेप्ताबहिर्मलानां, स्थूलाणु रत्रोतसां येत्ताः कर्ता गर्भाकृतिनाम्, आयुषोऽनुवृति प्रत्ययभूतो।
    2. कुपित शरीर गतः - नानाविध विकारैरूपतपति, बलवर्ण सुखायुषांमुपघाताप, मनोव्याहर्षयति, सर्वेन्द्रियाण्युपहन्ति, गर्भान विकृतिमापादय, भयशोक मोहदैन्याति।
    3. अकुपित अशरीरगतः - धरणीधारण, ज्वलनोज्जवालनम्, प्रवर्तनं स्त्रोतसां, विभागों धातुनां, बीजाभि संस्कारः।
    4. कुपित अशरीरगत - चतुर्युगान्त कराणां मेघसूर्यानलानिलानां विसर्गः।
    वायु के पर्याय - मृत्यु, यम, नियन्ता, प्रजापति, अदिति, विश्वकर्मा, विश्वरूप, सर्वग, सर्वतन्त्राणां विधाता, भावानामणुः विभु विष्णु कान्ता लोकांना।
6. मरीचि - पित्त संबन्धित वर्णन। अग्निरेव शरीरे पितान्तर्गतः कुपिताकुपितः शुभा शुभानि करोति।
7. काप्य - कफ संबन्धि वर्णन। सोम इव शरीरे श्लेष्मान्तर्गतः कुपिताकुपितः शुभा शुभानि करोति। दाढर्यः शैथिल्य , वृषता क्लीवता, ज्ञान अज्ञान आदि कर्म करता है।
8. आत्रेय - त्रिदोष संबंधि निर्णयात्मक मत। वात पित्त कफ तीनों दोष जब प्रकृतिस्थ रहते हैं। तब बल वर्ण सुखायु व दीर्धायु की उत्पत्ति होती है तथा ये ही दोष जब विकृत हो जाते हैं तो रोग उत्पन्न करते हैं।
    "गुणा: षड़ द्विविधो हेतुर्विविध कर्म यत् पुनः। वायोश्चतुर्विधं कर्म पृथक च कफ पितयो।|च.सू. 12/16 इस अध्याय में वायु के 6 गुण, द्विविध हेतु व 4 कर्मों का वर्णन है।

स्नेह अध्याय

"संड्ख्यै सड़ख्यात् सड़ख्येय:"

साख्य शास्त्र के ज्ञाता महर्षियों के साथ अग्निवेश ने आत्रेय से पूछा।
इस अध्याय में स्नेह विषयक 25 प्रश्नों का उल्लेख है।
स्नेह की योनि -2 स्थावर, जांगम।
स्थावर स्नेह :- तिल, प्रियाल, कुसुम, विभितक, निकोचक (निम्ब बीज) आदि।
सभी तैलों में चरक ने तिल तैल श्रेष्ठ माना है जबकि विरेचन के लिए एरण्ड़ तैल श्रेष्ठ माना है।
सर्वेषां तैल जातानां तिल तैल विशिष्यते। बलार्थे स्नेहने चाग्रयमैरण्डं तु विरेचने।। च.सू. 13/12
सर्पि स्तैलं वसा मज्जा सर्वस्नेहोत्तमताः। एषु चैवोतमं सर्पिः संस्कार स्यानुवर्तनात्।। च.सू. 13/13

1. **घृत के गुण :-**
    घृत पित्तानिल हरं रस शुक्रोजसां हितं। निर्वापणं मृदु करं स्वरवर्ण प्रसादनं।। च.सू. 13 / 14
2. **तैल के गुण :-**
    मारूतह्नं न च श्लेष्मवर्धनं बलवर्धनम्। त्वच्यमुष्णं स्थिरकरं तैलं योनि विशोधनम्।। च.सू. 13 / 15
3. **वसा के गुण :-**
    विद्ध भग्न हत भ्रष्टयोनि कर्णो शिरो रूजि। पौरूषोपचये स्नेहे व्यायामे चेष्यते वसा।। च.सू. 13/16
4. **मज्जा के गुण :-**
    बलशुक्ररस श्लेष्म मेदो मज्ज विवर्धनः। मज्जा विशेषतोऽस्थना च बलकृत स्नेहनेहितः।। च.सू. 13 / 17

स्नेह सेवन ऋतु व अनुपान-

1. सर्पि - शरद - गर्मजल
2. वसा, मज्जा - माधव -मण्ड
3. तैल - प्रावट - यूष

- वात पित्त आधिक्य वाले पुरूषों में तथा उष्णकाल में रात्री में तथा कफ की अधिकता वाले पुरूष तथा शीत काल में दिन में स्नेह का सेवन करना चाहिए।
- वात पित्त आधिक्य तथा उष्ण काल में दिन में स्नेह का सेवन करने से मूर्छा, पिपासा, उन्माद, कामला की उत्पत्ति हो जाती है जबकि कफ की अधिकता व शीत काल में रात्री में स्नेह का सेवन करने से आनाह , अरूचि, शूल, पाण्डु रोग की उत्पत्ति हो जाती है।

स्नेह प्रविचारणा - अच्छपेयस्तु यः स्नेहो न तमाहुर्विचारणम्।। स्नेहस्य स भिषग्दृष्टः कल्पः प्राथम कल्पिकः। रसों के संयोग भेद से स्नेह की 64 प्रविचारणाऐं होती है।

स्नेहमात्राः - चरक के अनुसार स्नेह की 3 मात्राऐं होती है।

1. प्रधान - अहोरात्र में जीर्ण (24 घण्टे)
2. मध्यम - एक दिन में जीर्ण (12 घण्टे)
3. ह्रस्व - अर्द्ध दिन में जीर्ण (6 घण्टे)
   सुश्रुत व वाग्भट् ने स्नेह की ह्रस्वयसी मात्रा का वर्णन किया है। (2 याम से कम समय)

स्नेह की प्रधान मात्रा सेवन योग्य

- प्रभुत स्नेहनित्या , क्षुत पिपासासहा नराः , पावकश्चोत्तम बलो ।
- गुल्म, सर्पदंष्ट, विसर्प, उन्माद, मूत्रकृच्छ, गाढवर्च रोगों में।
- शमन हेतु प्रयुक्त

मध्यम मात्रा में सेवन योग्य-

- अरूषिका, स्फोट, पिडिका ,कण्डु, पामा।
- कुष्ठ, प्रमेह , वातशोणित
- —मृदु कोष्ठी, मध्यमबल।
- शोधन हेतु प्रयुक्त।

मन्दविभ्रशा स्नेह की मध्यम मात्रा को मन्द विभ्रंशा कहते हैं।

ह्रस्व मात्रा सेवन योग्य -

- वृद्ध बालक सुकुमार हेतु।
- मंदाग्नि पुरूष में।
- ज्वर, कास, अतिसार में।

ह्रस्व स्नेह मात्रा के गुण -

परिहारे सुखा चेषां मात्रां स्नेहनं बृहणी वृष्या बल्या निराबाधा चिरंचाप्य अनुवर्तते। च.सू. 13/40

1. घृत सेवन के योग्य - वात पित्त प्रकृति पुरूष वात पित्तज विकारों में, चक्षुकामा, , पुष्टि कामा, प्रजा कामाः आयुप्रकर्षकामाः। क्षत क्षीण वृद्ध। दीप्त्योजः स्मृति मेधाग्नि बुद्धिन्द्रिय बलार्थिनः।।
2. तैल सेवन योग्य -- प्रवृद्ध श्लेष्म मेदस्काश्चलस्थूलगलोदराः। - वात प्रकृति - कृमि कोष्ठा: कूर कोष्ठाः।
3. वसा सेवन योग्य : - वातातप सहाः - रूक्षभाराध्वकर्षिताः - सशुष्क रेतोरूधिरा - अस्थि संधि सिरा स्नायु मर्म कोष्ठ महारूजः। - महाग्नि - बलवान मारूतोयेषां खानि चावृत्य तिष्ठति।
4. मज्जा सेवन योग्य - दीप्ताग्नि - क्लेश सहा - घस्मरा, स्नेह सेवी, वातार्ताःकूरकोष्ठाः।।
   स्नेह का प्रकर्ष काल : उसे 7 रात्री।

7 रात्री के बाद स्नेह सात्म्य हो जाता है। मृदुकोष्ठी को 3 दिन जबकि कूर कोष्ठी को 7 दिन स्नेहन के योग्य पुरूष- स्नेह सेवन करना चाहिए।
स्वेद्या: शोधितत्याश्च रूक्षा वातविकरिणः। व्यायाम मद्य स्त्री नित्याः स्नेह्या: स्युर्ये च चिन्तकाः।। च.सू. 13 / 52

सम्यक स्निग्ध के लक्षण -

वातानुलोम्यं दीप्तोऽग्निर्वर्च: स्निग्धंसंहतम्। मार्दवं स्निग्धता चान्गे स्तिथनामुपजायते।। च.सू. 13/57

अस्निग्ध के लक्षण -

पुरीषं ग्रथितं रूक्षं वायुरप्रगुणो मृदुः। पक्ता खरत्वं रौक्ष्यं च गात्रस्या स्निग्ध लक्षणम् ।।

अति स्निग्ध के लक्षण -

पाण्डुतागौरवं जाडयं पुरीषस्यविपक्वता । तन्द्रारूचि रुत्क्लेराः स्यातिस्निग्धलक्षणम् ।। - संशमन के लिए स्नेह सेवन अन्नकाल में जबकि संशोधन के लिए अन्न के जीर्ण होने पर करना चाहिए।

मृदु कोष्ठी: जिनमें पित्तदोष की प्रधानता हो तथा गुड इक्षुरस मस्तु क्षीर द्राक्षा रस पीलू रस त्रिफला से भी विरेचन हो जाता है। कूर कोष्ठी जिनमें वात दोष की प्रधानता हो तथा उपरोक्त द्रव्यों से विरेचन ना हो।

स्नेह पान जन्य अजीर्ण की चिकित्सा में चरक ने शीतल जल पान कर वमन जबकि सुश्रुत ने उष्ण जल पान कर वमन का निर्देश किया है।
स्नेह व्यापद चरक ने स्नेह व्यापद या स्नेह विभ्रम की संख्या 19 बताई हैं।
स्नेह व्यापद की चिकित्सा में तकारिष्ट का प्रयोग तथा गोमूत्र व त्रिफला का प्रयोग बताया हैं।
स्नेहन के तीन दिन बाद विरेचन तथा 1 दिन बाद वमन कराना चाहिए। 1
प्रस्कन्दन विरेचन
प्रच्छर्दन- वमन
स्नेह विचारणा के योग्य 1 स्नेह द्वेषी 2 स्नेह नित्य 3 मृदु कोष्ठी 4 क्लेशअसहा 5 मद्यनित्या
मद्यस्नेह हेतु पंच प्रासृतिकि वेया (घृत, तैल, वसा, मज्जा, व तण्डुल 1-1 प्रसुत) व लवण मिश्रित स्नेह का प्रयोग
हितकारी होता हैं
लवण के गुण अभिष्यदि स्निग्ध, उष्ण, सूक्ष्म, व्यवायी गुण के कारण स्नेह के साथ व्यक्ति को शीघ्र स्निग्ध कुष्ठी, शोथी व प्रमेही में कमशः पिप्पली हरीतकी व त्रिफला से सिद्ध घृत का प्रयोग बताया गया है। स्नेहाध्याय में चरक ने आत्रेय का पर्याय चन्द्रभागी बताया है।
कर देता हैं।